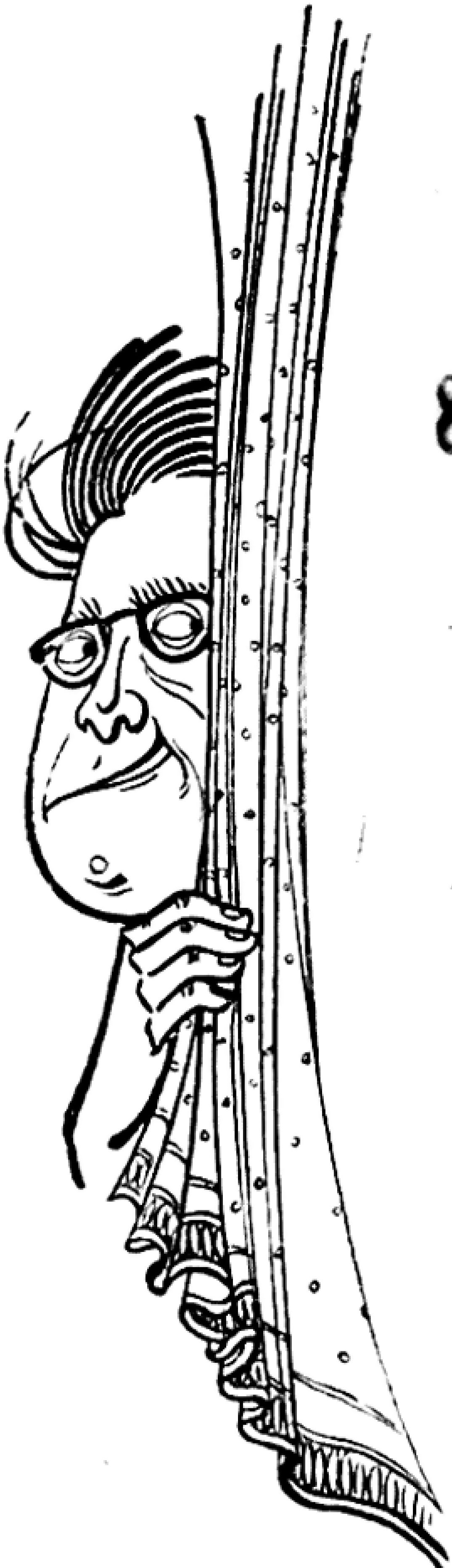


पर्दा उठने से पहले

राजेन्द्रकुमार शर्मा

आत्माराम एण्ड संस
दिल्ली ० जयपुर ० जालन्धर

PARDA UTHNE SE PAHLE

(One-Act-Plays)

by

Rajendra Kumar Sharma

Rs. 2.00

प्रकाशक

रामलाल पुरी संचालक
आत्माराम एण्ड संस
काश्मीरी गेट, दिल्ली-६
चौड़ा रास्ता, जयपुर
माई हीरां गेट, जालन्धर

आवरण

योगेन्द्रकुमार लल्ला

मूल्य

दो रुपए

मुद्रक

सैण्ट्रल इलैक्ट्रिक प्रेस
कमला नगर
दिल्ली-६

हिन्दी के
मूर्धन्य कवि एवं साहित्यकार
श्रद्धेय श्रीरामधारीसिंह 'दिनकर'
को
सादर

यह एकांकी संग्रह

एकांकियों का यह मेरा दूसरा संग्रह है। ये एकांकी आकाशवाणी के विभिन्न केन्द्रों से प्रसारित तथा पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं; इनमें से कुछ नाटकों का अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद भी हुआ है। सभी एकांकी रंगमंच पर खेले जा चुके हैं। इसलिए ये एकांकी पाठकों के लिए नये नहीं हैं।

आकाशवाणी से तो रात-दिन नाटक प्रसारित होते रहते हैं पर इन नाटकों की विशेषता यह है कि ये रंगमंच की कसौटी पर परखे जा चुके हैं और खरे उतरे है। यह तो प्रत्यक्ष ही है कि हिन्दी-साहित्य में ऐसे नाटकों का अभाव है। वैसे तो हिन्दी में अनेक नाटक लिखे जा रहे हैं और प्रकाशित हो रहे हैं पर अधिकतर ये नाटक रंगमंच की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए नहीं लिखे जाते। नाटक का रंगमंच से घनिष्ट सम्बन्ध है। यदि यह कहा जाय कि नाटक का जन्म रंगमंच के लिए ही हुआ है तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी।

हिन्दी-एकांकी का इतिहास बहुत पुराना नहीं है। इसका प्रादुर्भाव श्री जयशंकर प्रसाद के 'एक घूंट' से होता है। प्रसाद जी के पहले कुछ रुपक लिखे गये थे किन्तु उनमें आदर्श एकांकी के गुणों का अभाव था 'एक घूंट' प्राप्त करने के पश्चात् हिन्दी-साहित्य की वाटिका में एकांकी का पौधा पनपने लगा। परन्तु शीघ्र ही चलचित्रों ने रंगमंच का स्थान ले लिया। इसलिए अधिकतर एकांकी केवल इसी उद्देश्य से लिखे गये कि वे किसी स्कूल; कालिज या विश्वविद्यालय की किसी पाठ्य-पुस्तक में सम्मिलित हो जायें। इस उद्देश्य से लिखे गये नाटकों की भाषा को जान-बूझकर जटिल बनाया गया, पात्रों के सम्वाद ऐसी भाषा में लिखे गये मानो वे सभी हिन्दी के बड़े भारी पंडित हों। ऐसे पात्रों का वास्तविक जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं होता।

स्वतंत्रता के साथ हमारे प्रत्येक क्षेत्र में एक नई लहर, नया विश्वास और नई उमंग आई। इसके फलस्वरूप रंगमंच का पुनर्जन्म हुआ। रंगमंच की वृद्धि और दर्शकों की बढ़ती हुई रुचि के साथ नाटककार होड़ न लगा सके। कुछ लेखकों ने इस कमी को दूर करने के लिए प्रशंसनीय कार्य किया परन्तु फिर भी यह निर्विवाद कहा जा सकता है कि रंगमंचीय नाटकों का हिन्दी-साहित्य में अभाव है।

मैंने इन नाटकों को पुस्तक रूप में आने से पूर्व रंगमंच पर प्रस्तुत किया है, इनका निर्देशन किया है और इनमें अभिनय किया है। इन तीनों सोपानों को सफलतापूर्वक पार करने के उपरांत मैंने इन नाटकों को यह रूप दिया है और मुझे अब पूर्ण विश्वास है कि ये अभिनयात्मक दृष्टि से खरे उतरेंगे।

इन नाटकों की भाषा मेरी भाषा नहीं है और न इनके पात्र मेरे कल्पित पात्र ही हैं। मैं भाषा की कृत्रिमता में विश्वास नहीं करता और विशेषकर नाटकों में। इन नाटकों के पात्र इस वसुधा के पात्र हैं। उनकी अपनी भाषा है, अपनी मान्यताएँ हैं, अपना दृष्टिकोण और अपने विचार हैं। प्रत्येक पात्र स्वतन्त्र रूप से हमारे सामने आता है। मैंने उनको अपनी भावनाओं, मान्यताओं, दृष्टिकोण के आवरण से ढकने का प्रयत्न नहीं किया है। आप उनको सही रूप में देख सकते हैं। जिन पात्रों का इन नाटकों में चरित्र-चित्रण किया गया है वे आपके आस-पास ही मंडराते रहते हैं और आप उन्हें भली-भांति पहचानते हैं।

मैं अपने मित्र श्री चन्द्रप्रकाश गुप्ता और अन्य कलाकारों का आभारी हूँ, जिन्होंने इन नाटकों को रंगमंच पर प्रस्तुत करने में सहयोग दिया है।

जी० आई० ९१६,
विनय नगर,
नई दिल्ली

—राजेन्द्रकुमार शर्मा

क्रम

१. उधार देवता १
२. एक दिन की छुट्टी २१
३. बुरे फँसे नाम कमाने में ३५
४. समझौता ५१
५. किराये के आँसू ७५
६. पर्दा उठने से पहले ८६

इस संग्रह के एकांकियों को मंच पर
खेलने से पूर्व लेखक अथवा
प्रकाशक की अनुमति
लेना आवश्यक है

★

उधार देवता

पात्र

ग्वालिन

बनिया

पण्डित निरोगानन्द

दर्जी

रेखा

[रंगमंच के पिछले भाग में एक दीवार दाईं से बाईं ओर पूरे रंगमंच पर बनी हुई है। इस दीवार में दो दरवाजे हैं जो अलग-अलग मकान के हैं। रंगमंच का पृष्ठ भाग ग्राम रास्ता है। दाएं विंग के पास एक लैम्प-पोस्ट है। दाईं ओर का दरवाजा बाबू अमीरचन्द के मकान का है और दूसरा उनके पड़ोसी का। अमीरचन्द के दरवाजे पर काले कोयले से उनका नाम लिखा हुआ है जो लगता है कि किसी बच्चे ने लिख दिया है। रात के दस बजे का समय है। पर्दा उठने पर एक ग्वालिन दूध के बर्तन लिए रंगमंच पर प्रवेश करती है और बाबू अमीर-चन्द का दरवाजा खटखटाती है।]

ग्वालिन—(दरवाजा खटखटाती है) बाबू जी ! बाबू जी ! (कुछ ठहर कर) बाबू जी !···ओह ! कोई बोलता ही नहीं ! (फिर खटखटाती है) बाबू जी, खोलते क्यों नहीं ? मैं ग्वालिन हूँ। यह अच्छी बात तो नहीं। बाबू जी, मैं सब जानूं, बत्ती बुझा के लेट गए हो। (फिर खटखटाती है) बाबू जी, पैसों की सख्त जरूरत है, तभी आई हूँ···दरवाजा खोल दो, सारे नहीं तो कुछ पैसे ही दे दो। (फिर खटखटाती है) बाबू जी, ओ बाबू जी, दो महीने से अधिक हो चुके हैं, एक धेला नहीं दिया। जब आऊँ कुछ-न-कुछ बहाना बना दो। यह बात ठीक नहीं। हमारे भी बाल-बच्चे हैं, कहाँ से खिलावें ? उस दिन भी दरवाजा लगा के सो गए थे, आज तो मैं पैसे ले के जाऊँगी। मैंने भी आज कसम खा ली है, खाली हाथ नहीं जाने की ! (जोर-जोर से खटखटाती है) बाबू जी, खोल दो, नहीं तो दरवाजा तोड़ दूंगी। यह कहाँ का तरीका है ! बाबू जी ! (जोर से खटखटाती है)।

[बनिए का प्रवेश]

बनिया—क्यों भई, बाबू अमीरचन्द का मकान यही है ?

ग्वालिन—हाँ, यही है भइया।

बनिया—हाँ, याद आ गया। यही है। बाबू घर में हैं?

ग्वालिन—हैं तो घर में, पर मुझे देख के बत्ती बुझा ली है। जान के सो गए हैं।

बनिया—(**व्यंग्य से**) मैं इन सब बाबुओं को जानता हूँ। वैसे तो रोज रात के ग्यारह-ग्यारह बजे तक ताश खेलते रहेंगे। अब हम लोगों को देख के सो गया है। तू कब की यहाँ खड़ी है?

ग्वालिन—मैं तो अभी आई हूँ। बहुत दरवाजा खटखटाया, कोई खोले नहीं।

बनिया—हमारा ऐसा एक और भी ग्राहक है। सवेरे ही घर से निकल जाता है और रात को लौटता है। जब रात को जाओ तो दरवाजा नहीं खोलता।

ग्वालिन—तो तुम ही खुलवाओ दरवाजा।

बनिया—तू हट जा। देख, मैं कुण्डी खुलवाता हूँ। (**दरवाजा खटखटाता है**) बाबू अमीरचन्द जी, कुण्डी खोल दो नहीं तो अच्छा नहीं होगा। हमारे साथ यह चार सौ बीसी मत करो। मैं फिर कहे देता हूँ, सीधी तरह कुण्डी खोल दो। (**फिर खटखटाता है**) सौदा लेने तो आधी रात को भी आ जाते हो। अब पैसे देने का नाम नहीं लेते। (**बहुत जोर से दरवाजा खटखटाता है**) मैं कहता हूँ, कुण्डी खोल दो नहीं तो मैं दरवाजा तोड़ डालूंगा।

ग्वालिन—अब यह दरवाजा नहीं खोलेगा।

बनिया—खोलेगा कैसे नहीं! आज मैंने भी पैसे लेके जाने हैं चाहे सारी रात यहीं सोना पड़े।

ग्वालिन—तुमने भी भइया इस बाबू से पैसे लेने हैं?

बनिया—अरी, हाँ। दो महीने खिलाया है। अब पैसे देने के नाम साँप सूंघ गया।

ग्वालिन—मेरे भी दो महीने के पैसे नहीं दिए।

बनिया—तुम से यह दूध लेता होगा।

ग्वालिन—हाँ, भैया, रोज सेर-भर दूध लेवे था। इस पर हर दूसरे-तीसरे दिन सेर दूध फालतू लेवे था। कदी कहा करे था आज फिरनी बनानी है और कदी कुस्टरड।

बनिया—(हँसकर) कुस्टरड नहीं, कस्टरड!

ग्वालिन—मुझे क्या पता! कुछ ऐसी ही गिटपिट करे था। तब तो दूध ऐसे लेवे था मानो इसके घर की भैंस हो।

बनिया—यह कब से तुम से दूध लेता है?

ग्वालिन—पिछले साल इस बाबू ने एक महीना दूध लिया, फिर कहने लगा दूध अच्छा नहीं है। उस महीने के पैसे कई फेर आने पर दिए। चार महीने हुए मुझे कहने लगा कि दूध फिर से दे जाया कर।

बनिया—तो आजकल भी यह तुमसे दूध लेता है?

ग्वालिन—मुझे तो दो महीने हो गए बन्द किए को, पर दो महीने के पैसे लेने हैं। कई बेर आ चुकी हूँ, पैसे देने में ही नहीं आवे।

बनिया—सुना है बाबू की घर वाली बड़ी तेज है। बाबू तो बस जोरू का गुलाम है। वह सारा वेतन रख लेती है और इसे धेला भी नहीं देती।

ग्वालिन—हाँ, यू तो मैंने भी देखा है। बाबू उससे डरे है।

बनिया—भगवान् बचाए आजकल की औरतों से! पता नहीं क्या मन्तर पढ़ती हैं कि बाबू लोग उनके इशारे पर नाचने लग जाते हैं।

ग्वालिन—यह रहने दे, लाला। औरतें तो सीधी होवें, पैसे देने से न रोकतीं।

बनिया—कई बाबू तो इतने अच्छे होते हैं कि अपने-आप पहली तारीख को पैसे दे जाते हैं। यह पता नहीं कहाँ से पल्ले पड़ गया!

ग्वालिन—मुझे भी आज पाँच साल हो गए इस मुहल्ले में दूध देते हुए। आज तक किसी ने मेरे पैसे न मारे।

बनिया—तब तो तेरी किस्मत अच्छी है।

ग्वालिन—पारसाल एक बाबू की आगरा की बदली हो गई। उसने वहाँ से अगले महीने अपने पड़ोसी को मेरे पैसे मनीआर्डर कर दिए और लिख दिया कि ग्वालिन को पैसे दे देना ! भगवान् भला करे उसका, बड़ा नेक आदमी था।

बनिया—ऐसे आदमी कम होते हैं।

ग्वालिन—तुम्हारी भैया, काहे की दूकान है ?

बनिया—हम जनरल मरचैण्ट हैं।

ग्वालिन—वह क्या होवे ?

बनिया—हम घर-गृहस्थी की सब चीजें रखते हैं। आटा, तेल, नून, साबुन, बिस्कुट—हमारी दुकान पर सब चीजें मिलती हैं।

ग्वालिन—तो यूँ कहो पंसारी की दुकान है।

बनिया—शहर में इसे जनरल मरचैण्ट बोलते हैं।

ग्वालिन—तो बाबू तेरे यहाँ से आटा-दाल लावे था ?

बनिया—दियासलाई से लेकर आटे की बोरी तक हमारी दुकान से उधार लेता था। पहले महीने तो पैसे फट दे दिए, फिर दो महीने तक देने का नाम नहीं लिया। हमने भी पिछले महीने से सौदा देना बन्द कर दिया है। पहले तो दफ्तर दुकान की तरफ से जाता था, पर अब पता नहीं किधर से निकल जाता है।

ग्वालिन—यह चारपाई किसकी है ?

बनिया—किसी की भी हो, तू बैठ जा।

ग्वालिन—मैं तो आज थक गई हूँ। शहर होकर आई हूँ।

बनिया—तो बैठ जा, आराम कर ले।

ग्वालिन—तू भी बैठ जा, लाला। हाँ, कोई तरकीब सोच जिससे तेरे पैसे भी मिल जाएँ और मेरे भी।

बनिया—तेरा कौन-सा गाँव है ?

ग्वालिन—बदरपुर।

बनिया—बन्दरपुर ?

ग्वालिन—बन्दरपुर नहीं, बदरपुर ! यहाँ से तीन मील दूर है।

बनिया—तू रोज आती है ?

ग्वालिन—हाँ लाला, हमारा तो रोज का ही काम है। तड़के चार बजे गाँव से चलती हूँ, पूरा २५ सेर दूध बाँटती हूँ। तुम कहाँ के रहने वाले हो ?

बनिया—अब तो दिल्ली ही समझो। तुझे कितने पैसे लेने हैं ?

ग्वालिन—दस कम पचास। तुमने कितने पैसे लेने हैं ?

बनिया—मैंने तो बड़ी रकम लेनी है। पूरे ६० रुपए १३ आने।

ग्वालिन—लाला, तू अपने पैसे भी ले ले और मेरे भी दिलवा दे, तब तुझे मानूंगी।

बनिया—मैं कौन-सा थानेदार लगा हूँ ! यहाँ अपनी रकम वसूल करनी कठिन हो रही है। पर मैं भी देखता हूँ कब तक नहीं देता, पाई-पाई वसूल करके छोड़ूंगा।

ग्वालिन—तो खुलवा न दरवाजा।

बनिया—सच्ची बात तो यह है कि उसने हम दोनों को देख लिया, अब वह कुण्डी नहीं खोलेगा।

ग्वालिन—तो फिर क्या करें ?

बनिया—देख, मैं बताऊँ, तू फिर कभी आ जाना। अब तो चली जा, पाँच-छः दिन पीछे आ जाना।

ग्वालिन—लाला, तू तो अमीर आदमी ठहरा। तेरा सैकड़ों का लेन-देन है। तू चला जा। बाबू तेरे डर के मारे दरवाजा नहीं खोलता।

बनिया—किसी ने ठीक कहा है। अपनी अक्ल और दूसरों का धन सबको ज्यादा लगता है। तू तो ४० रु० की खातिर इतना शोर मचा रही है।

ग्वालिन—मेरे लिए तो यही बड़ी रकम है।

बनिया—तू तो नाहक परेशान होती है। कल से दूध में दो लोटे और पानी मिला देना, तेरा हिसाब पूरा हो जाएगा।

ग्वालिन—गंगा कसम मैं तो दूध में पानी का छींटा भी नहीं डालती।

बनिया—ठीक है। तू दूध में पानी थोड़े ही मिलाती है, तू तो पानी में दूध मिलाती है!

ग्वालिन—कैसी बात करे, भइया! मैं तो निखालिस दूध बेचूं।

बनिया—क्यों झूठ बोलती है? इन ४० रु० में कम से कम २० रु० का पानी होगा।

ग्वालिन—रहने दे, लाला। तुम लोग क्या कम करो?

बनिया—हम कुछ न कुछ तो दें। पानी के पैसे तो नहीं लेते!

ग्वालिन—क्यों अधिक बात बढ़ावे, लाला?

बनिया—कई बार तो तुम लोग नाले का गन्दा पानी मिला देते हो। यह भी कभी सोचा है जो बच्चा ऐसा दूध पियेगा वह मरेगा या जियेगा।

ग्वालिन—दूध पी के कोई न मरे।

बनिया—तू अपने धरम से कह दे कि पानी नहीं मिलाती।

ग्वालिन—बड़ा आया धरम-करम वाला! तुम बनिया लोग क्या कम करो, तौल में सदा डंडी मारो। कभी पूरा नहीं तौलो।

बनिया—तू सबको बेईमान समझती है। हम तेरी तरह दुनिया को नहीं ठगते।

ग्वालिन—बड़ा आया हरिशचन्दर का अवतार! तुम लोग आटे में मिट्टी मिलाओ, मिर्चों में ईंट पीस के मिला दो। ऐसा आटा खाके लोग मरेंगे नहीं तो और क्या होगा!

बनिया—पर तू कौन-सा आटा खाती है जो इतनी तगड़ी हो रही है!

ग्वालिन—मुए, तेरे घर तो खाने नहीं जाती, मैं तो गेहूँ छाँट के, बीन के आप पीसती हूँ।

बनिया—कितने मर गए तेरे गाँव में आटा खाके?

ग्वालिन—तुम तो मारने में कोई कसर न छोड़ो। पिछले महीने हमारे पडोस में एक लड़का छत पे से गिर गया। उसके घनी चोट आई। रात को उसके हल्दी लगा दी, पर मुए बनिए ने भगवान् जाने उसमें क्या मिलाया था। उसकी टांग सूज के दुगनी हो गई। भला इससे बढ़ के और क्या पाप होगा?

बनिया—अब बस कर! तू औरत है या···

ग्वालिन—होश में बात कर! बेईमान कहीं का!

बनिया—क्यों बड़-बड़ करे? बहुत हो गया नहीं तो···

ग्वालिन—जबान संभाल के बात कर! अब कुछ कहा तो जबान नोच लूंगी। मेरा नाम दुर्गा है, दुर्गा!

बनिया—मेरा नाम भी सोहनलाल है, सोहनलाल!

ग्वालिन—(क्रोध में) मैं तेरा सोहन हलवा ही बना दूंगी!

बनिया—तू चुप करे या नहीं! क्या करूँ तू औरत है। तेरी जगह मर्द होता तो मजा चखा देता।

ग्वालिन—मैंने तेरे जैसे कई को सीधा कर दिया। परसों की बात है कि पंसारी ने सेर के १४ छटांक चावल तोले। मन्ने भी पकड़ लिया और सेर का बांट उठा के मारा, तनिक बच गया नहीं तो मुए की खोपड़ी फूट जाती।

बनिया—तू तो फिर जैसे बच जाती! पर याद रख यह तेरा गाँव नहीं, शहर है।

ग्वालिन—यहाँ तो तुम लोग और भी लूट मचाओ। आने की चीज दो और बाबू के खाते में दो आने लिखो।

बनिया—तू चली जा यहाँ से! मुझे गुस्सा आ गया तो···

ग्वालिन—तो क्या करेगा? बड़ा आया गुस्से वाला! ये लाल-लाल आँखें किसी और को दिखाइयो। मैं ना डरने की इस धमकी से!

बनिया—जा कमीनी कहीं की!

ग्वालिन—कमीना तू और तेरे घरवाले! बेईमान कहीं का!

बनिया—अरी, हट यहाँ से !

ग्वालिन—खबरदार मुए अगर हाथ लगाया !

[बनिया ग्वालिन का बर्तन फेंकता है। ग्वालिन बर्तन उठा के मारने की कोशिश करती है। दोनों चिल्लाते हैं। इतने में पण्डित निरोगानन्द आ जाते हैं।]

पण्डित—अ-र-र-र ! आप लोग क्रोध क्यों कर रहे हैं ? क्या बात है, बहन जी ?

ग्वालिन—यह लाला खुद तो दुनिया-भर की बेईमानी करे और मुझे कहे दूध में पानी मिलाऊँ। मैं पूछूँ कौन है जो निखालिस दूध बेचे।

बनिया—और जैसे दुनिया में मैं ही कम तोलता हूँ।

पण्डित—राम-राम ! इसका तो यह अर्थ हुआ कि आप दोनों ही मानते हैं कि आप धोखा देते हैं। कम तोलना और दूध में पानी मिलाना दोनों ही पाप हैं।

बनिया—भई वाह ! क्या बात है ! बड़ी नई बात बताई है तुमने !

पण्डित—बहन जी, अन्त में धर्म और ईमानदारी की जीत होती है।

बनिया—मैं पूछता हूँ तुम कौन हो ?

पण्डित—मेरा नाम पण्डित निरोगानन्द है।

ग्वालिन—पण्डित जी, तुम क्या कथा करते हो ?

पण्डित—नहीं, मैं कथा नहीं करता। मैं तो···

बनिया—चलते-फिरते नजर आओ, पण्डित जी। खामखां बीच में अपनी टांग न अड़ाओ।

पण्डित—यदि आपको चोट लग जाती तो मरहमपट्टी तो मुझे ही करनी पड़ती।

बनिया—**(जोर से हाथ जोड़कर)** जाओ पण्डित निरोगानन्दजी, अपना काम करो।

पण्डित—क्षमा करो, मैं तो केवल इतना ही जानना चाहता हूँ कि

लाला अमीरचन्द का मकान यही है ?

बनिया—अमीरचन्द नहीं फकीरचन्द कहो ! आँख के अन्धे नाम नैनसुख ! अम्मा ने नाम रख दिया अमीरचन्द और यह पता नहीं कि इसे सारी दुनिया का कर्जा देना है।

ग्वालिन—तुम भी इस बाबू को पूछो। तुम का करो ?

पण्डित—मैं खानदानी वैद्य हूँ। (**खांसता है**) अरे, तुम लोगों ने मेरा नाम नहीं सुना ? इस नगर में तो कोई ऐसा विरला ही होगा जो मुझे न जानता हो।

बनिया—इसमें मेरा क्या कसूर, पण्डित जी। बात यह है कि पिछले पाँच साल से मैं बीमार ही नहीं हुआ। क्या करूँ, एक छींक तक नहीं आई, नहीं तो आपके दर्शन हो जाते।

पण्डित—मैं तो पिछले तीस वर्षों से नगरवासियों की सेवा कर रहा हूँ।

ग्वालिन—पण्डित जी, एक बात पूछूं ?

पण्डित—कहो।

ग्वालिन—ये खाँसी तुमको कब से है ? तुम से तो अपनी खांसी दूर नहीं होती !

पण्डित—तुम दूध बेचती हो न।

ग्वालिन—हाँ, मैं तो दूध ही बेचूं।

पण्डित—तुम कितना दूध रोज पीती हो ?

ग्वालिन—मुझे तो दूध अच्छा न लगे। मैं तो चाय पिऊँ।

पण्डित—बस, यही हाल मेरा है। मुझे लोगों के इलाज करने से ही फुरसत नहीं मिलती कि अपनी ओर ध्यान दूं।

बनिया—क्या बात बनाई है, वैद्य जी !

ग्वालिन—वैद्य सारे बहुत बातूनी होवें। हमारे गांव में भी एक वैद्य है। बस बातें बना के काली काली-सी गोलियां ही सबको दे दे।

पण्डित—तुम लोग तो मूर्ख हो !

ग्वालिन—ठीक से बात करो, वैद्य जी।

बनिया—तुमने तो पण्डित जी, अकल की गोलियाँ खा रखी हैं।

पण्डित—हे भगवान्! किन लोगों से पाला पड़ा है! हाँ, मैं यह पूछ रहा था कि अमीरचन्दजी का···

बनिया—हाँ, इसी घर में रहते हैं। वैद्य जी, क्या तुमने भी उनसे पैसे लेने हैं?

पण्डित—हाँ भई, छः महीने से अपना और अपने सारे खानदान का उधार इलाज करवाता रहा। एक पैसा भी नहीं दिया।

बनिया—वैद्य जी, आपने असली दवाइयाँ दी थीं!

पण्डित—दवाइयाँ भी कहीं असली और नकली होती हैं। जब लोग दर्द से चिल्लाते हुए मेरे पास आते हैं उस समय तो कहते हैं कि सब कुछ ले लो पर दर्द दूर कर दो, परन्तु दर्द मिटते ही सब भूल जाते हैं। मैं आज पैसे लेके ही जाऊँगा। क्या आप लोग भी पैसे लेने आए हैं?

बनिया—और नहीं तो हम लोग दावत खाने आए हैं! मैंने तो १०० रु० लेने हैं।

ग्वालिन—और मैंने ४० रु० दूध के लेने हैं।

बनिया—अरी, सच-सच क्यों नहीं कहती २० रु० पानी के और २० रु०······

ग्वालिन—(क्रोध से) फिर लगा तू, अंट-शंट······

पण्डित—शान्ति! शान्ति!

ग्वालिन—मेरा नाम शान्ति नहीं, दुर्गा है।

बनिया—अच्छा वैद्य जी महाराज, आप तो चलो, देर हो रही है।

पण्डित—क्या मतलब?

बनिया—पण्डित जी! आप फिर कभी आ जाना।

पण्डित—मैं आपसे तो कुछ नहीं माँग रहा हूँ!

बनिया—कितने पैसे लेने हैं, वैद्य जी?

पण्डित—२० रु० १२ आने।

बनिया—बस, २० रु० की खातिर आपने इतनी तकलीफ की ?

पण्डित—मैंने इसी तरह २०० रु० से अधिक लेना है। दवाइय. मेरे घर तो नहीं बनतीं !

बनिया—दवाइयों की एक ही कही, पण्डित जी ! आप तो २ पैसे की सौंफ पीस लो और पुड़िया बनाकर ८ आने ले लो।

पण्डित—हम पैसे दवाई के नहीं बल्कि दवाई बताने के लेते हैं।

बनिया—आप लोगों की तो पांचों घी में हैं। एक बार दुकान में कोई आ जाए, फिर बिना कुछ दिए नहीं जा सकता। हमारे पास कई ग्राहक तो वैसे ही दिमाग चाट के चले जाते हैं।

पण्डित—हम लोगों का दुःख दूर करते हैं। लोग हमारे पास रोते हुए आते हैं और हँसते हुए जाते हैं। यूं ही कोई पैसा नहीं दे देता।

बनिया—दवाई चाहे फायदा करे या न करे, तुम्हारे पैसे खरे। हमारी तो चीज ले जाके दस दिन बाद फिर लौटा देते हैं। तुम्हारे भी आज तक कोई दवाई लौटाने आया है।

पण्डित—ठीक है, लाला जी, मैं आपकी तरह रात-दिन लोगों को धोखा नहीं देता।

बनिया—मैं सब जानता हूँ, तुम तो रात-दिन यही मनाते हो कि बीमारी फैले।

पण्डित—लाला जी, क्यों अपनी पोल खुलवाते हो ? कभी सोचा आपने कि आप कितना पाप करते हैं ?

बनिया—हम कौन-सा पाप करते हैं ?

पण्डित—खाने की चीजों में मिलावट करने से अधिक और क्या पाप है ? पिछले महीने जो सौंफ और धनिया लाया था, उसमें न जाने क्या मिला था, एकदम गला रुक गया।

बनिया—लोग जब सस्ती चीज मांगते हैं तो हम असली कहाँ से दें

पण्डित—पर इसका यह मतलब तो नहीं कि तुम लोगों के जीवन से खेलो, उन्हें जहर दे दो।

बनिया—पण्डित जी, यह लैक्चर हमने भी बहुत सुन रखे हैं। हमारी दुकान पर तुम-जैसे आके ५ रु० सेर असली घी मांगें। ५ रु० तो हमें भी नहीं पड़ता, हम कहां से दे दें। हमने भी दुकान ४ पैसे कमाने के लिए खोली है। हमारे भी बाल-बच्चे हैं, पेट है।

पण्डित—तुम लोगों का पेट कभी नहीं भरता। तुम लोग हवेलियां खड़ी कर लेते हो और फिर भी रोते रहते हो।

बनिया—तुम भी महल खड़ा कर लो, कौन रोकता है! हमने किसी के घर डाका तो नहीं डाला।

पण्डित—यह डाका नहीं तो और क्या है! लोग भूख से बिल्लाते रहें, बच्चे रोटी के लिए तरसते रहें, पर तुम लोग अपने गोदाम का ताला नहीं खोलते। तुम लोग इस आशा में कि अनाज का भाव बढ़ेगा अपने गोदाम पर सांप बनकर बैठ जाते हो।

बनिया—ज्यादा बातें न बनाओ, वैद्य जी। तुम लोग तो मरीज मर जाए तो भी फीस ले लो।

ग्वालिन—तुम लोग तो नाहक झगड़ते हो। हम लोग तो अपनी-अपनी रकम लेने आए हैं। हो सके तो बाबू को जगाओ, नहीं तो अपने-अपने घर चलो।

[**नेपथ्य में बादल गरजने की आवाज**]

ग्वालिन—लो, यह तो बरखा आ रही है। मैं तो चली।

बनिया—अरी, ठहर जरा। हम लोग तो बातों में लग गए। वैद्य जी, तुम खुलवाओ दरवाजा।

ग्वालिन—हां, पण्डित जी, हम लोग तो चिल्ला-चिल्लाकर हार गए।

पण्डित—अन्दर तो अंधेरा है। मालूम होता है बाबू जी सो गए हैं।

बनिया—अजी, जान-बूझकर सो गए हैं।

ग्वालिन—बाबू ने आगे भी कई बेर मुझे देख के बत्ती बुझा ली।

पण्डित—मुझे नहीं मालूम था कि यह ऐसा है नहीं मैं पहले ही

पैसे ले लेता।

बनिया—हमें कौन-सा मालूम था नहीं तो हमारा क्या दिमाग खराब हुआ था जो इसे उधार माल देते।

ग्वालिन—किसी के माथे पर थोड़ा लिखा है कि यह आदमी कैसा है।

बनिया—लो, यह तो बूंदें भी आ गई।

ग्वालिन—हाय राम ! अब क्या होगा ? जो बरखा होने लगी तो कहाँ जाएँगे ?

बनिया—अच्छा पण्डित जी, तुम दरवाजा खटखटाओ।

पण्डित—बाबू अमीरचन्द जी, जरा दरवाजा खोलिए।

बनिया—अरे बाबू, अब तो खोल दे।

ग्वालिन—यूं न खोलेगा।

[तभी एक दर्जी दौड़ा हुआ आता है और तीनों से टकराता है। तीनों चिल्लाते हैं।]

ग्वालिन—ओ, देख के ! आंख हैं या बटन !

बनिया—तुम आदमी हो या पाजामा !

पण्डित—आप अजीब प्रकृति के मनुष्य हैं !

दर्जी—अमा माफ करना, बूंदें पड़ रही हैं। मैंने सोचा यहीं खड़ा हो लूं।

पण्डित—**(दरवाजा खटखटाता है)** बाबू अमीरचन्द जी !

दर्जी—क्या कह रहे हो ! बाबू अमीरचन्द जी !

पण्डित—जी हाँ, अमीरचन्द।

दर्जी—तो क्या अमीरचन्द जी का दौलतखाना यही है ?

बनिया—दौलतखाना नहीं कंगालखाना कहो, कंगालखाना !

दर्जी—अमा, वाह ! मैं तो इन्हीं का मकान ढूंढ रहा था। क्या वह घर पर तशरीफ नहीं रखते ?

बनिया—तशरीफ घर पर ही है। तशरीफ को जान के सुला

दिया है।

दर्जी—अमा, आप लोग कैसे तशरीफ लाए ?

ग्वालिन—हम कुछ न लाए! हम तो अपने-अपने पैसे लेने आए हैं।

पण्डित—तो क्या आपने भी इन बाबू जी से कुछ लेना है ?

दर्जी—जी हाँ।

बनिया—वाह भई, तुमने भी अभी आना था।

दर्जी—तो आप लोग···

बनिया—हम सब यहाँ इसीलिए आए हैं। मैंने किराने के १०० रु० लेने हैं, और इसने दूध के ४० रु० और पण्डित जी ने उसे २० रु० का चूरन खिलाया है।

ग्वालिन—तुमने क्या किया, भाई ?

दर्जी—मैं टेलर मास्टर हूँ।

ग्वालिन—तो तुम स्कूल के मास्टर हो।

पण्डित—मास्टर नहीं, ये दर्जी हैं, दर्जी !

बनिया—वाह ! भई अमीरचन्द, तूने भी दुनिया-भर के पैसे देने हैं। पर हम लोग भी खूब इकट्ठे हुए हैं।

पण्डित—आपने कितने पैसे लेने हैं ?

दर्जी—मैंने पूरे ८ रु० लेने हैं।

बनिया—तो तुम सूट भी उधार सीते हो ?

दर्जी—अमां, खैर हुई कि सूट नहीं सिया, नहीं तो ५० रु० पर चक्कू चल जाता। मैंने तो सिर्फ जाकेट तैयार की थी।

पण्डित—जाकेट की सिलाई ८ रु० !

बनिया—कपड़ा भी तुमने दिया होगा।

दर्जी—यह सिर्फ सिलाई के पैसे हैं।

ग्वालिन—हाय राम ! सिलाई के ८ रु० ! हमारे गाँव में तो २ रु० लें।

दर्जी—यह गाँव नहीं, शहर है।

ग्वालिन—यहाँ तो तुम लोग खूब लूट मचाओ। मैं कहूँ जाकेट में ४ आने का धागा लगता होगा और कैंची कौन-सी जाकेट काटने में घिस जावे।

दर्जी—कैंची तो नहीं घिसती पर सारा दिन बैठे-बैठे कमर टेढ़ी हो जाती है। १५० रु० महीना दुकान का किराया और ४०० रु० कारीगरों को देता हूँ।

पण्डित—फिर भी जाकेट के ८ रु० तो बहुत हैं।

बनिया—भई, तुम्हारा काम सबसे बढ़िया है। घाटे का कोई मतलब ही नहीं। कोई नुक्स रह भी गया तो कह दिया आजकल का फैशन है!

पण्डित—यह तो सत्य है। संसार के सारे फैशन दर्जियों की गलतियों से ही निकलते हैं।

दर्जी—अमा, यह क्या कह रहे हो? हम कपड़ा एक नम्बर सीते हैं। नापसन्द होने पर दाम वापस करने की शर्त करें।

बनिया—ये सब कहने की बातें हैं।

पण्डित—सूट के तो ४०-५० लेते होगे।

दर्जी—मैंने कहा न ५० रु० लेता हूँ।

ग्वालिन—५० रु०! कलयुग है कलयुग!

दर्जी—मैं अपनी मेहनत के पैसे लेता हूँ, मेहनत के! तुम्हारी तरह नहीं कि दूध में एक लोटा पानी मिलाया और १० आने खरे कर लिए।

ग्वालिन—मुँह संभाल के बात कर! मैं सब जानूं तुम लोग कपड़ा चोरी करते हो। चोट्टे कहीं के!

दर्जी—क्या कह रही है? हम तेरे जैसे गंवार के कपड़े नहीं सीते नहीं तो एक दिन में पागल हो जाएं! हम बड़े आदमियों के कपड़े सीते हैं।

ग्वालिन—और बड़े आदमियों की चोरी भी बड़ी होवे। मैं देखूं शहर की औरतन का आधा कपड़ा तुम खा जाओ! ऐसा जम्पर सीवें कि

आधा पेट नंगा रैवे और पीठ तो सारी दिक्खे ।

दर्जी—एक दिन वह जम्पर पहन के तो देख, तू कितनी अच्छी लगे ।

ग्वालिन—मुए, तुझे शरम नहीं आवे यू कहते । यू न समझियो···

बनिया—अबे क्यों मजाक करे, दर्जी ? वह सच कहती है ।

दर्जी—मेरा नाम दर्जी नहीं, रामप्रसाद है ।

बनिया—कोई परसाद हो पर हो तो दर्जी ।

दर्जी—४ पैसे का सौदा देने वाले लाला, तुम क्या समझो हमारी अहमियत को !

बनिया—यह चार-चार पैसे का सौदा ही चार दिन न मिले तो नानी याद आ जावे ।

दर्जी—अरे रहने दे, लाला । हम न हों तो दुनिया की सारी तहजीब उठ जाए । राजा हो या मन्त्री, दारोगा हो या संतरी, सबको हम ही सजाते हैं । अमा, सच तो यह है कि हम अपने सिले हुए कपड़ों से ही जिसे जो चाहें बना दें ।

[**नेपथ्य में दस बजने की आवाज**]

पण्डित—ओह ! दस बज गए । इस बहस से क्या लाभ ? अपनी-अपनी जगह सभी बड़े हैं । क्यों न मिलकर कोई उपाय सोचें ।

दर्जी—अमा, यह तो ठीक कहा । बेकार वक्त खोने से क्या फायदा ?

ग्वालिन—हम तो जोर लगा चुके । अब तुम लगाओ जोर ।

दर्जी—ऐसे काम नहीं चलेगा । मैं बताऊँ, बाहर से ताला लगा दो । सवेरे उठके फिर आ जायेंगे ।

पण्डित—परन्तु मेरा विचार है कि ऐसा करने से पहले उन्हें एक बार बता दें ।

दर्जी—इसमें तो कोई हर्ज नहीं ।

बनिया—ऐसा भी करके देख लो ।

सब एक साथ—दरवाजा खोल दो नहीं तो हम लोग बाहर से ताला लगा देंगे ।

बनिया—एक बार फिर कहो।

[**सब फिर कहते हैं। रेखा का प्रवेश**]

रेखा—आप लोगों ने क्या शोर मचा रखा है? रात के दस बज चुके हैं। मुहल्ले में किसी को सोने दोगे या नहीं?

ग्वालिन—बहनजी, हमने तो पैसे लेने हैं।

बनिया—हाँ, हम सबने पैसे लेने हैं।

रेखा—किससे पैसे लेने हैं?

दर्जी—बाबू अमीरचन्द से।

रेखा—जो इस मकान में रहते थे?

पण्डित—जी हाँ।

रेखा—उनकी तो बदली हो गई।

बनिया—क्या कहा, बदली हो गई!

रेखा—हाँ, वह तो कल रात आगरा चले गए। मकान तो खाली है। मालिक-मकान पीछे से ताला लगा गया है।

सब एक साथ—ऐं···ऐं···ऐं···

एक दिन की छुट्टी

पात्र

विजय	:	एक नवयुवक
अजय	:	विजय का मित्र
धनिया	:	विजय का नौकर
पुष्पा	:	विजय की पत्नी
वर्माजी	:	विजय का अफसर

[एक साधारण कमरा जिसमें एक चारपाई बिछी है और दो कुर्सियाँ और एक छोटी-सी मेज भी रखी है. इसलिए आप इसे शयन-गृह भी कह सकते हैं और बैठक भी।

शेष सामान वही है जो एक साधारण क्लर्क के यहां हो सकता है।

पर्दा उठने पर विजय एक कुर्सी पर बैठा दिखाई देता है। टांगें उसकी मेज पर रखी हैं। वह एक किताब के पन्ने उलट रहा है और कुछ गुनगुना रहा है।]

विजय—धनिया ! ओ धनिया !

धनिया—जी, बाबू जी !

विजय—क्या कर रहा है ?

धनिया—मैं चींटियों में से खांड निकाल रहा हूं, बाबू जी।

विजय—क्या कहा ?

धनिया—हाँ···हाँ···खांड में से चींटियाँ निकाल रहा हूँ।

विजय—देख किताब किधर रखी है ?

धनिया—कौन-सी किताब ?

विजय—जिस पर औरत की तसवीर है।

धनिया—बाबू जी, आजकल तो हर चीज पर औरत की तसवीर होती है। और तो और बाबू जी, बीड़ी के बंडल पर भी औरतों की तसवीर होती है। **(जाने लगता है)**।

विजय—धनिया, एक गिलास पानी ला।

धनिया—नल का या घड़े का ?

विजय—**(कुछ सोचकर)** अच्छा रहने दे।

[**धनिया फिर जाने लगता है**]

विजय—**धनिया, चाय बना।**

धनिया—बाबू जी, चाय की पत्ती तो···

विजय—सामने लाला की दुकान से ले आ। मेरे हिसाब में लिखा देना।

धनिया—आज तो लाला की दुकान बन्द है, बाबू जी।

विजय—आगे से लाला की दुकान बन्द होने से एक दिन पहले देख लिया कर कि कौन-सी चीज लानी है।

धनिया—बहुत अच्छा।

[**धनिया अन्दर जाने लगता है मगर फिर लौट आता है**]

धनिया—(**डरते हुए**) बाबू जी!

विजय—क्या है?

धनिया—बाबू जी, मुझे छुट्टी चाहिए।

विजय—छुट्टी?

धनिया—बात यह है बाबू जी कि मेरी घर वाली बीमार है।

विजय—(**आश्चर्य से**) तेरी भी शादी हो गई! तूने कभी बताया नहीं।

धनिया—आपने कभी पूछा ही नहीं।

विजय—मैं सब जानता हूँ। तुम लोग छुट्टी लेने के लिए किसी न किसी को बीमार कर देते हो।

धनिया—नहीं बाबू जी, मैं सच कहता हूँ।

विजय—मुझे समझाने चला है! दफ्तर में भी मुझे ऐसी ही अर्जियों से रोज पाला पड़ता है। कल दफ्तर में एक आदमी का तार आया था कि उसकी माँ मर गई है। बाद में पता चला कि छुट्टी के लिए बेचारे की माँ को तीन बार मरना पड़ा।

[**दरवाजा खटखटाने की आवाज**]

विजय—(धनिया से) देख, कौन है?

[धनिया जाता है। **दो-तीन क्षण बाद अजय प्रवेश करता है**]

विजय—आओ अजय, मैं तुम्हें ही याद कर रहा था। बड़ी देर से

अकेला बैठा हूँ। बिलकुल बोर हो गया हूँ।

अजय—तो क्या आज दफ्तर से जल्दी आ गए ?

विजय—जल्दी क्या, यहाँ तो आज दफ्तर बिलकुल गोल कर दिया।

अजय—क्या बात है ! मिलाओ हाथ ! किसी ने अंग्रेजी में ठीक कहा है—Great men think alike ! बड़े आदमियों के विचार एक-से ही होते हैं।

विजय—तुम भी क्या आज दफ्तर नहीं गए ?

अजय—गया तो था पर आज कुछ काम करने का मूड नहीं था इसलिए बा-बदौलत भी लंच के बाद दफ्तर को 'गुड नाइट' कर आए।

विजय—तुम्हारा अफसर अच्छा मालूम होता है। जब जी चाहता है, चले आते हो।

अजय—ये अफसर सब एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं। कोई भी अफसर छुट्टी देकर खुश नहीं होता। पर यहाँ भी बड़े पापड़ बेले हैं। वह ब्रह्म अस्त्र फेंकता हूँ कि कभी बेकार नहीं जाता। जानते हो आज क्या किया ?

विजय—क्या किया ?

अजय—वह पिछले महीने मैंने··· उस ड्रामे में··· क्या नाम था उसका···हाँ···'दाढ़ का दर्द'···में बीमार का पार्ट किया था न। बस, वही एक्टिंग आज दफ्तर में कर दी।

विजय—पार्ट तो उस दिन तुमने बहुत अच्छा किया था।

अजय—सच कहता हूँ आज भी फौरन लोग इकट्ठे हो गए। एक गरमागरम दूध का गिलास ले आया। यार पी गए। एक, दो गोलियाँ ले आया। मैंने दूसरी तरफ मुंह करके जेब में डाल लीं। फिर साहब आया और कहने लगा—"रमेश, तुम अभी घर जाओ। काम की फिकर न करो, कल कर लेना।"

[**दोनों हँसते हैं**]

विजय—सच है, दफ्तर में अफसर से और घर में बीवी से बिना

झूठ बोले गुजारा नहीं होता।

अजय—यह तो सौ नए पैसे सच है। पर आज तुम दफ्तर क्यों नहीं गए?

विजय—बस, कुछ न पूछो, यार। वह हमारी छोटी साली साहिबा हैं न!

अजय—कौन, कान्ता?

विजय—हाँ।

अजय—वह तो कलकत्ता है।

विजय—जी हाँ! बस, जब भी आती है तो कोई न कोई आफत लाती है।

अजय—तो क्या कान्ता आई है?

विजय—अभी आई कहाँ है! जब आयेगी तो पता नहीं क्या होगा! कल रात दो बजे तार आया। पहले तो यार मैं डर गया। मैंने कुण्डी नहीं खोली। जब मुझे यकीन हो गया कि तार वाला है तब दरवाजा खोला। लिखा था—'Reaching Tomorrow.'

अजय—ओह! तो कल आएगी!

विजय—नहीं भई, तारीख कल की पड़ी हुई थी। मतलब यह कि आज आना था।

अजय—कलकत्ता से गाड़ी तो सुबह आती है।

विजय—भई, कलकत्ता से तो कई गाड़ियाँ आती हैं, पर तार में कुछ नहीं लिखा था। गाड़ी से आना है या हवाई जहाज से यह भी तो नहीं लिखा!

अजय—तुम भी बस यूं ही हो! जब कुछ न लिखा हो तो मतलब गाड़ी से ही होता है।

विजय—नहीं भई, वह अभी तक एक बार गाड़ी से, दो बार हवाई जहाज से और एक बार तो अपनी मोटर में ही कलकत्ते से यहाँ तक आ चुकी है।

अजय—भई खूब !

विजय—अपनी जो आज परेड हुई है हम ही जानते हैं। कलकत्ते से पहली गाड़ी सुबह ६ बजे आती है। श्रीमती जी ने बस ४ बजे से ही शोर मचाना शुरू कर दिया कि जाओ कहीं देर न हो जाए। मतलब यह कि ६ बजे स्टेशन पहुँचे। गाड़ी आई पर कान्ता जी नहीं आईं। ७ बजे हवाई अड्डे पहुँचे, हवाई जहाज आया पर कान्ता जी नहीं आईं।

अजय—तो जनाब ने अपनी साली साहिबा का स्वागत करने के लिए छुट्टी ली है।

विजय—सुन तो सही, घर आया तो श्रीमती जी बोलीं कि दोपहर ११ बजे की और शाम ९ बजे की गाड़ी देख आना, ३ बजे वाला हवाई जहाज भी देख आना। क्या करता, अपना भाई-बहन होता तो आराम से घर बैठ जाता पर श्रीमती जी की बहन जो ठहरी ! 'बहुत अच्छा' कहना पड़ा।

अजय—तो अभी रात को स्टेशन जाना है !

विजय—नहीं भई, ११ बजे उनका दूसरा तार आ गया कि आज नहीं आ रही हैं ! अपने राम ने सुबह ही दफ्तर से छुट्टी ले ली।

अजय—अर्जी भिजवा दी थी ?

विजय—अर्जी किसके हाथ भिजवाता ? टेलीफोन कर दिया कि श्रीमतीजी को जोर का बुखार है। वह चारपाई से हिल नहीं सकतीं।

अजय—और भाभी हैं कहाँ ?

विजय—दोपहर को अपनी मौसी की लड़की के देवर की शादी में गीत गाने चली गई हैं। यहाँ झूठ भी बोले और दोपहर से घर में बैठे झक मार रहे हैं !

अजय—अच्छा दोस्त तो उठो। चलो, कहीं घूम आएँ।

विजय—कहाँ चलोगे ?

अजय—चल यार, आज फिर सरकस ही देखा जाय। सुना है बहुत अच्छा है। बन्दर तबला बजाते हैं, घोड़े नाचते हैं और इन्सान हिन-

हिनाते हैं।

विजय—सरकस के तो अब टिकट मिल चुके।

अजय—अब उठेगा भी या बातें ही बनाए जायेगा! टिकट नहीं मिलेंगे तो लौट आएँगे। वहाँ कोई हमें शेर तो पकड़ नहीं लेगा!

विजय—कितने बजे खतम होगा सरकस ?

अजय—साढ़े नौ बजे। जल्दी कर यार। पहन कोट और जूते!

विजय—अभी दो मिनट में तैयार होता हूँ। (**टाई बांधने लगता है**)।

अजय—कल रात बड़ा मजा आया। कपूर को जानते हो न जो हमारे पास रहता है ?

विजय—हाँ-हाँ, जिसकी बीवी मास्टरनी है ?

अजय—भगवान् न करे किसी की बीवी मास्टरनी हो! कल बेचारा रात कुछ देर से आया तो उसकी बीवी ने जानते हो क्या किया ?

विजय—क्या किया ?

अजय—उसने उससे सलेट पर २० बार लिखवाया—'मैं आइन्दा ८ बजे से पहले घर पहुँचूंगा। आइन्दा ८ बजे से पहले घर आऊँगा। शंकरलाल कपूर बकलम खुद···'

विजय—शुक्र है भगवान् का अपनी बीवी मास्टरनी नहीं, नहीं तो सारी उमर सलेट पर लिखते ही गुजर जाती। पर एक बात है यार। दफ्तर की छुट्टी का समय हो गया है। कहीं हमारा मैनेजर रास्ते में मिल गया तो···

अजय—मैं बताऊँ, हाथ में एक शीशी ले चल। वह मिल जाए तो झट कह देना कि डाक्टर के यहाँ दवाई लेने जा रहा हूँ।

विजय—क्या बात है!

अजय—देख लो दोस्त क्या सूझी है!

विजय—अगर यार वह सरकस में मिल गया तो···

जय—अब अगर-मगर छोड़! भई सुन, वह राकेश न, उसे भी

साथ ले चलें।

(अ)जय—देर हो गई है।

अजय—पास में ही तो है। मैं चलकर तैयार करवाता हूँ, तू वहीं आ जाना!

[धनिया का प्रवेश]

विजय—राकेश के यहाँ धनिया को भेज देते हैं।

अजय—धनिया के बस का नहीं। मैं चलता हूँ, तू आ जाना।

विजय—अच्छा तो तू चल!

अजय—पर यार जरा जल्दी करना!

विजय—मैं अभी आया।

धनिया—बाबू जी, चाय बनाऊँ?

विजय—अब चाय रहने दे।

विजय—देख धनिया, मैं सरकस देखने जा रहा हूँ। देर से आऊँगा और तेरी बीवी जी शायद आज वहीं ब्याह वाले घर ही रहेंगी।

धनिया—(प्रसन्नता से) बहुत अच्छा बाबू जी!

विजय—मैं आकर खाना खाऊँगा।

[विजय बाहर जाता है, पर दरवाजे तक जाकर वापस आ जाता है। वह इधर-उधर चक्कर काटने लगता है।]

विजय—(घबराकर) हे भगवान्! अब क्या होगा? क्या करूँ?

धनिया—क्या हुआ बाबूजी? कैसे लौट आए?

विजय—तुझे क्या बताऊँ! मैं मना करता रहा कि मत जाओ, पर कौन सुनता है। इन औरतों से तो भगवान् ही बचाए!

धनिया—बाबू जी, बात क्या है?

विजय—तू क्या समझेगा! वर्मा जी इधर ही आ रहे हैं।

धनिया—कौन वर्मा जी?

विजय—मेरा अफसर! तेरे अफसर का अफसर!

धनिया—तो क्या हुआ बाबू जी? आप फिकर न कीजिए, मैं ऐसी

चाय बनाऊँगा जो पी के उनकी तबीयत खुश हो जाए।

विजय—(एकदम चुटकी बजाकर) धनिया, इधर आ। (**धनिया को कुर्सी पर बैठने का इशारा करता है। धनिया कुर्सी पर बैठने में आनाकानी करता है पर विजय उसे पकड़कर बैठा देता है**) धनिया, देख तुझे बीबी जी बनना पड़ेगा।

धनिया—यह क्या कहते हो, बाबूजी? (**धनिया एक तरफ भागने लगता है पर विजय उसे फिर बैठाता है**)।

विजय—बात यह है कि सवेरे मैंने दफ्तर कहलाया था कि तेरी बीवी जी बीमार हैं। उन्हें बुखार है। अब यह मेरा अफसर उनकी खबर लेने आ रहा है और तेरी बीवी जी शादी में गई हुई हैं। अगर वह अब उन्हें यहाँ नहीं देखेगा तो समझेगा कि मैं हमेशा झूठ बोलकर छुट्टी लेता हूँ। और धनिया, अगर मेरी नौकरी चली गई तो तेरी भी नौकरी...

धनिया—पड़ोस वाली बीबीजी को बुला लाऊँ?

विजय—बेवकूफ कहीं का! खुद भी पिटेगा, मुझे भी पिटवाएगा।

धनिया—बाबू जी, मैं नीचे खड़ा हो जाता हूँ। वह आपका मकान पूछेंगे तो मैं गलत पता बता दूंगा।

विजय—बेकार बातें न बना! उन्हें घर मालूम है। जल्दी कर! वक्त बहुत थोड़ा है। वह सामने सड़क पर किसी से बातें कर रहे हैं, आते ही होंगे।

धनिया—(घबराकर) तो मैं क्या करूँ, बाबू जी?

विजय—तू जल्दी से अपनी बीबी जी की धोती पहन ले और कम्बल ओढ़कर सो जा। बस, 'हाय-हाय' करते रहना।

धनिया—मुझे तो डर लगता है।

विजय—डर किस बात का? उसने कोई तेरा मुंह थोड़े ही देखना है। पांच-दस मिनट की बात है। (**धोती देते हुए**) ले पहन।

धनिया—बाबू जी, पाजामे पर यह धोती कैसे पहनूं?

विजय—अच्छा छोड़! ले जम्पर ही पहन ले और चुन्नी ले ले।

(विजय उसे जम्पर पहना देता है। सिर पर चुन्नी रख देता है और फिर पकड़कर उसे चारपाई पर लिटा देता है) बस हाय-हाय करते रहना। (विजय दौड़कर एक तसला लाता है और चारपाई के नीचे रख देता है। फिर दौड़कर एक मेज लाकर धनिया के सिरहाने रख देता है)।

विजय—(स्वगत) दवाई भी तो चाहिए। (कुछ सोचकर) एक शीशी में स्याही डालकर पानी भर देता हूँ। (एक शीशी में थोड़ी-सी स्याही डालकर उसमें पानी भरकर मेज पर रख देता है)।

विजय—(धनिया से) अरे, मुँह ढक ले।

धनिया—(उठने का प्रयत्न करते हुए) बाबू जी, पानी पी आऊँ।

विजय—तू लेटा रह। मैं पानी ला देता हूँ।

[विजय एक गिलास में पानी लाकर धनिया को देता है। धनिया पानी पीकर गिलास विजय को पकड़ा देता है और विजय उसे मेज पर रख देता है। तभी दरवाजे पर खट-खट होती है।]

विजय—ले, वह आ गए। अब 'हाय हाय' तो कर।

धनिया—हाय, मर गया! मर गया!

विजय—मर गया नहीं, मर गई! समझा!

धनिया—(कराहते हुए) मर गई! मर गई!

[विजय दरवाजा खोलता है। वर्माजी उसके साथ अन्दर आते हैं।]

विजय—आप! आइए।

वर्मा—कैसी तबीयत है अब?

विजय—कुछ ठीक है, पर खास फर्क नहीं। आपने बड़ी तकलीफ की। बैठिए।

[धनिया के धीरे-धीरे कराहने की आवाज]

वर्मा—तुम्हारे मोहल्ले में ही वह किनारे वाली पीली कोठी है न, वह शर्माजी की है। अपने पुराने मित्र हैं। उनके लड़के की सगाई थी। वहाँ आया था। सोचा, तुम्हारे यहाँ भी हो चलूँ।

विजय—बड़ी तकलीफ की आपने।

वर्मा—इन्हें तो काफी तकलीफ मालूम होती है।

विजय—इस समय भी १०३° बुखार है।

वर्मा—कल तो तुम दफ्तर आए थे। कोई बात नहीं की। क्या अचानक तबीयत खराब हो गई ?

विजय—जी ! कल रात अच्छी-भली खाना पका रही थीं कि एकदम···एकदम···पैरों में दर्द होने लगा। बाद में पीठ में और फिर सिर दर्द करने लगा।

वर्मा—बुखार कब चढ़ा ?

विजय—जी आज सवेरे।

वर्मा—दर्द रात-भर होता रहा और बुखार सुबह चढ़ा।

विजय—जी नहीं ! बुखार तो रात को ही चढ़ गया होगा, पर सुबह डाक्टर ने देखा। हमारे पास तो थर्मामीटर था नहीं।

वर्मा—कौन से डाक्टर को दिखाया है ?

विजय—क्या नाम है उसका ?···डाक्टर नहीं, हकीम साहब को दिखाया है।

वर्मा—क्या बताया हकीम ने ?

विजय—कह रहे थे कि बस तीन-चार दिन में ठीक हो जाएँगी; घबराने की कोई बात नहीं।

वर्मा—(शीशी की ओर देखते हुए) यह दवाई दी है ?

विजय—जी हाँ।

वर्मा—और कुछ भी दिया है ?

विजय—(सोचकर) और···जी हाँ···एक इंजैक्शन लगाया था और तीन पुड़ियाँ खाने को दी थीं।

वर्मा—तो ये हकीम लोग भी इंजैक्शन लगाने लगे !

विजय—आजकल तो सभी हकीम इंजैक्शन लगाते हैं।

वर्मा—मैं तो राय दूंगा कि इन वैद्य-हकीमों के चक्कर में मत

पड़ो । किसी अच्छे डाक्टर को दिखाओ ।

विजय—बात यह है कि इन्हें हकीम की दवा बड़ी सूट करती है । जब भी बीमार पड़ती हैं हकीम साहब की दवा से आराम हो जाता है ।

वर्मा—इस समय तो तबीयत ज्यादा खराब लगती है ।

विजय—जी नहीं, सुबह से तो कुछ फायदा है ।

वर्मा—पर अभी तो तुम कह रहे थे कि कोई फायदा नहीं । मेरी राय है कि किसी लेडी डाक्टर को भी दिखा दो ।

विजय—लेडी डाक्टर को !

वर्मा—हाँ भई, मेरी भतीजी ने भी इसी साल M. B. B. S. किया है । उसे सुबह भेज दूंगा ।

विजय—नहीं-नहीं, उन्हें तकलीफ देने की कोई आवश्यकता नहीं ।

वर्मा—तकलीफ कैसी ! वह तो अपनी ही बच्ची है ।

[**पुष्पा का प्रवेश**]

विजय—तुम आ गईं !

पुष्पा—हाँ ।

पुष्पा—यह कौन लेटा है ?

विजय—इन्हीं की तबीयत खराब है । तुम उधर बैठो, मैं अभी आया । यह हैं हमारे मैनेजर ।

पुष्पा—(हाथ जोड़कर) नमस्ते ।

वर्मा—नमस्ते जी ।

विजय—तुम जाकर अंगीठी जलाओ । जाओ भी !

[**पुष्पा अन्दर चली जाती है**]

वर्मा—यह…

विजय—जी यह मेरी साली है ।

[**पुष्पा का प्रवेश**]

पुष्पा—ओह ! तो क्या कान्ता आ गई ? कान्ता को क्या हुआ ?

विजय—नहीं, कान्ता नहीं आई है। अच्छा जी, मैं कल दफ्तर आ जाऊँगा।

वर्मा—दफ्तर की चिन्ता न करो। जब तक तुम्हारी श्रीमती जी की तबीयत ठीक न हो तुम दफ्तर न आओ।

पुष्पा—मैं पूछती हूँ बात क्या है? यह कौन लेटी है?

वर्मा—आपको मालूम नहीं इनकी श्रीमती जी बीमार हैं।

पुष्पा—क्या कहा इनकी श्रीमती जी! फेरे तो मेरे साथ लिए हैं, मैं भी देखूँ यह सौत कौन है?

[**पुष्पा धनिया का कम्बल खींचती है**]

विजय—यह क्या कर रही हो?

पुष्पा—(**कम्बल खिंचकर फेंक देती है**) कौन है तू? धनिया! यह सब क्या है?

[**धनिया एकदम चारपाई से कूदकर नीचे आ जाता है**]

धनिया—(हाथ जोड़कर) मेरा···कोई कसूर···नहीं, बीबी जी। बाबूजी ने······

वर्मा—(हँसकर) इसकी क्या जरूरत थी, भई! मैंने तो आज तक कभी छुट्टी देने में आनाकानी नहीं की। फिर आज तो अपने मैनेजिंग डाइरेक्टर यूरोप गए हैं। सवेरे सब उन्हें हवाई अड्डे पर छोड़ने गए थे। उसके बाद आज दफ्तर में छुट्टी कर दी थी।

विजय—सच!

★

बुरे फंसे नाम कमाने में

पात्र

जमना	:	रैस्टोरैंट का बैरा
शम्भू गुटरी गुटल्लू	:	तोन मित्र
सरस्वती	:	गुल्लू की मंगेतर
राकेश	:	सरस्वती का एक सम्बन्धी

स्थान—एक रेस्टोरेंट

समय—रात के आठ बजे

[रंगमंच के एक तरफ एक छोटा-सा काउण्टर है। उसके पास एक आलमारी है जिसमें बिस्कुट, अण्डे, केक इत्यादि चीजें रखी हुई नजर आती हैं। सामने तीन-चार मेज और कुर्सियां हैं। पीछे दीवार पर फिल्म अभिनेत्रियों की तस्वीरें टंगी हुई हैं। बाकी चीजें निर्देशक अपनी सुविधानुसार लगा सकता है जो कि एक आम मामूली रेस्टोरेंट में होती हैं। पर्दा उठने पर जमना मेज साफ करता हुआ नजर आता है। कुछ देर बाद शम्भू, जो हॉकी की टीम की वर्दी में है एक हाथ में हॉकी लिए हुए आता है।]

जमना—साहब, आज मैच कैसा रहा ?

शम्भू—बराबर।

जमना—तो हुजूर आज फिर बराबर की रही। एक घंटे में कोई गोल नहीं हुआ।

शम्भू—नहीं भई, दोनों तरफ बारा-बारा गोल हुए।

जमना—तब तो साहब गोली या तो इस गोल में रही, या उस गोल में, बीच में तो आई नहीं होगी।

शम्भू—तुम्हें खेल से बड़ी दिलचस्पी है, जमना।

जमना—क्या पूछते हो साहबजी, मैं तो खानदानी खिलाड़ी हूं। बस, कसर इतनी है कि खेलता ही नहीं। मेरे मामा तो वो फुटबाल खेलते थे कि क्या बताऊं। दूर-दूर तक उनकी धाक थी। एक बार इतनी ऊंची किक मारी कि एक उड़ते हुए हवाई जहाज के मुसाफिरों ने कैंच कर ली थी।

शम्भू—तुम्हारा भी जवाब नहीं जमना।

जमना—यकीन मानिए हुजूर बिलकुल सच कह रहा हूं। उनके हाथ में २४ घंटे फुटबाल ही रहती थी।

शम्भू—और तुम्हारे हाथ में रसगुल्ला रहता है।

जमना—दिनों के फेर हैं हुजूर, नहीं तो हमारे खानदान में आज तक किसी ने भी नौकरी नहीं की।

शम्भू—जरा कम बोला कर।

जमना—आज तो वैसे ही मेरी जबान पर छाले पड़े हुए हैं। बोला ही नहीं जाता।

शम्भू—अच्छा खाने के लिए क्या है ?

जमना—फिर वही बात हुजूर ? यह पूछिए क्या नहीं है ?

शम्भू—खूब !

जमना—कलकत्ते के रसगुल्ले, करांची का हलवा, आगरे का पेठा, मथुरा के पेड़े, हापुड़ के पापड़ और......

शम्भू—बस-बस ! पीने को...

जमना—चाय, कॉफी, कोको, लस्सी, सोडा, लैमन...

शम्भू—अच्छा ए...ए...ए...तुम वो लाओ।

जमना—क्या साहब ?

शम्भू—एक गिलास पानी।

जमना—आप मेच खेल कर आ रहे हैं, थके हुए हैं, खाली पानी न पीजिए।

शम्भू—अच्छा तो जरा ठहरो। अभी वह गुटरी और गुल्लू भी आते होंगे। इकट्ठे ही चाय पियेंगे।

जमना—गुटरी बाबू भी आ गए।

[**गुटरी का प्रवेश**]

गुटरी—कहो यार, सुना है कि आज तो एक दर्जन गोल हुए।

शम्भू—एक नहीं, दो दर्जन। एक दर्जन उन्होंने किए और एक दर्जन हमने।

गुटरी—तुम हॉकी खेल रहे थे या गेंद-डंडा !

शम्भू—तुम अपनी कहो।

गुटरी—बस क्या कहूँ, अपनी तो किस्मत ही बड़ी खराब है

शम्भू—क्यों, क्या हुआ ?

गुटरी—कुछ न पूछ यार ! किस्मत के आगे किसी का जोर नहीं चलता। किसी ने सच कहा है—

> **लाख कोशिश करे इन्सान क्या होता है,**
> **होता है वही जो मंजूरे खुदा होता है !**

शम्भू—कुछ बताएगा भी !

गुटरी—क्या कहूँ, यार, पाँच बार गोल की तरफ हिट मारी मगर बदकिस्मती से चार बार आउट गई और एक बार गोल-कीपर ने रोक ली नहीं तो भगवान कसम आज पाँच गोल किए होते।

शम्भू—क्या कहने आपके ! अगर हमारे घर के ना मरते तो अपनी फौज होती। इस अगर-मगर को छोड़, सीधी तरह बता कि···

गुटरी—एक गोल से जीते हैं।

शम्भू—किसने किया ?

गुटरी—यह भी पूछने की बात है। अपनी टीम में दो ही गोल करने वाले हैं—मैं या सलीम। अपनी तो आज किस्मत ही टेढ़ी थी, गोल कैसे होता ?

शम्भू—जमना, जमना !

जमना—गुड मार्निंग साहब।

गुटरी—गुड इवनिंग जमना।

जमना—मुबारक हो हुजूर। आज तो आपकी टीम जीत गई। आप लोग भी खूब खेलते हैं। आपकी टीम से टक्कर लेना कोई बच्चों का खेल नहीं।

गुटरी—यह ले अठन्नी—छः आने का सिगरेट का पैकट ले आ।

जमना—कौन-सा लाऊँ ?

गुटरी—पाकेट-मार।

जमना—हाँ साहब आप तो वही पीते हैं।

शम्भू—अब तुम्हारा मैच किससे पड़ेगा?

गुटरी—शेरे बबर।

शम्भू—कैसी टीम है?

गुटरी—बस नाम को ही शेरे बबर है। उम्मीद है उसकी चरखी तो हम लोग घुमा देंगे।

जमना—यह लीजिए। क्या अर्ज करूं। परसों मारकीट स सौदा ला रहा था। रास्ते में मैदान में देखा तो आप खेल रहे थे। मैं साइकिल पर से उतरकर देखने लगा। आप भी खूब खेलते हैं। बस, कमाल है हुजूर। गेंद एक बार आपके पास आनी चाहिए, फिर बस गोल ही होता है।

गुटरी—परसों तो हम लोग यूं ही खेल रहे थे।

जमना—आपके मुकाबले का रैट औट (Right out) तो दिल्ली में नहीं है हुजूर। यह बाकी दो आने।

गुटरी—इन्हें तुम्हीं रखो।

जमना—चाय लाऊं?

शम्भू—अच्छा ले आओ।

जमना—खाने को क्या लाऊं?

गुटरी—आज हवा ही खाएंगे। बस पीने को ही ले आ।

शम्भू—क्या बजा है?

गुटरी—सात बज चले हैं। क्या बात है? कुछ जल्दी है?

शम्भू—गुल्लू ने भी यहां आठ बजे आने को कहा था।

गुटरी—गुल्लू भी आदमी तो एक नम्बर है। अपने आपको बड़ा खिलाड़ी समझता है।

शम्भू—खिलाड़ी-विलाड़ी तो क्या है। उस बेचारे को यह भी पता नहीं कि गेंद बल्ले से मारते हैं या बल्ला गेंद से!

गुटरी—कल कितने रन बनाए थे?

शम्भू—दस। पर वह भी क्या कोई क्रिकेट का मैच था। किसी

को खेलना ही नहीं आता था। ऐसा मालूम हो रहा था जैसे गुल्ली-डंडा खेल रहे हों।

गुटरी—एक घंटा तो लगाता है पैड और दस्ताने पहनने में; और विकट पर दस मिनट भी नहीं ठहरता ! हाँ, आदमी मजेदार है।

शम्भू—कोई जलसा हो, नाटक हो, रामलीला हो या भाषण हो रहा हो। बस, जहाँ शामियाना देखा वहीं पहुँच जाता है।

गुटरी—और फिर इन्तजार करता है कि लोग शोर करें और इसे स्टेज पर आकर यह कहने का मौका मिले कि भाइयो, चुप रहो ! ताकि लोग उसे अच्छी तरह देख लें।

शम्भू—पर भई, दोस्तों का दोस्त है और यारों का यार।

गुटरी—लो, याद आ गया। इसकी तो सगाई हो गई है।

शम्भू—सगाई !

गुटरी—हाँ-हाँ, अभी दो-तीन दिन ही हुए हैं।

शम्भू—भई वाह ! हम लोगों को खबर ही नहीं।

गुटरी—देख, वह आ रहा है गुल्लू।

शम्भू—फिर हो जाय।

दोनों एक साथ—(**गाकर**) अजी देखो खिलाड़ी चले आ रहे हैं, चले आ रहे हैं; देखो खिलाड़ी चले आ रहे हैं।

[**गुल्लू का प्रवेश**]

शम्भू—यह है श्री गुलशन तिवारी, क्रिकेट और हाकी के मशहूर खिलाड़ी। वैसे इन्हें हम लोग मोहब्बत यानि प्यार से गुल्लू कहते हैं।

गुटरी—बड़ी खुशी हुई आपसे मिलके। मुझे गुलजारीलाल उर्फ गुटरी कहते हैं।

गुल्लू—अच्छा जी !

[**सब हंसते हैं**]

गुल्लू—आज तो बड़े मूड में हो तुम लोग।

शम्भू—कांग्रेचूलेशन्स !

गुटरी—यानि कि मुबारक हो।

गुल्लू—क्या बात है?

गुटरी—एक नहीं दो-दो बातें हैं।

शम्भू—पहले पार्टी दो, फिर पूछना क्यों? जमना!

जमना—जी साहब।

गुटरी—साहब से आर्डर लो।

जमना—नमस्ते साहब! आप तो कई दिनों के बाद दिखाई दिए हैं। भगवान् कसम आपका वह पिछले मैच का चउआ तो अभी तक याद है। क्या गेंद काटी थी! वाह! वाह! क्या लाऊँ, हुजूर?

गुल्लू—पहले एक गिलास पानी ला।

गुटरी—पानी से काम नहीं चलेगा! आज तो बढ़िया पार्टी होनी चाहिए।

गुल्लू—बताएगा भी कुछ।

शम्भू—क्या कहने जनाब के! बड़े भोले बन रहे हो जैसे कुछ मालूम ही नहीं। अभी तो रोटी को ओची कहते हो!

गुटरी—एक बात तो यह कि कल जनाब ने दस रन बनाए। अपना रिकार्ड तोड़ दिया। कल पहली दफा स्कोर-बोर्ड पर तेरे लिए दो अंकों का प्रयोग हुआ।

गुल्लू—मैं तो सेंचरी बनाता अगर बी० एल० डब्ल्यू० न हो गया होता।

शम्भू—बी० एल० डब्ल्यू० क्या बे!

गुल्लू—बैंड लक बिफोर विकेट!

[सब हंसते हैं]

गुटरी—खैर, यह बात छोड़ो। अब असली बात पर आओ।

शम्भू—सुना है हुजूर बुक हो गए हैं।

गुल्लू—पहेली न बुझवाओ। साफ-साफ कहो।

शम्भू—क्यों बनता है! मतलब यह है कि तेरी सगाई हो गई है।

गुटरी—आजकल तो लड़कियाँ ढोल पीटकर अपनी सगाइयों में सगाई का ऐलान करती हैं और एक हम लोगों को पता तक नहीं।

गुल्लू—सगाई नहीं, अभी तो रोक ही हुई है।

शम्भू—मतलब यह कि अब तुझे यह खतरा नहीं कि चौरासी लाख योनियों के बाद मिला हुआ मनुष्य-जन्म कुँआरे रहकर ही गुजारना पड़ेगा।

गुटरी—सुना है अच्छी जगह हाथ मारा है।

गुल्लू—लड़की पढ़ी-लिखी है। पिछले महीने उसे खिचड़ी बनाने में अपने कालिज में प्रथम पुरस्कार मिला था।

गुटरी—फिर क्या है यार, तुम्हारी तो पाँचों घी में और सिर…

शम्भू—खिचड़ी में।

गुटरी—तुम्हारे ससुर क्या करते हैं ?

गुल्लू—बड़े भारी व्यापारी हैं।

शम्भू—हमने कहा न तुम्हारी तो किस्मत ही खुल गई।

गुटरी—खुल नहीं गई बल्कि यह कहो फट गई।

गुल्लू—वह तो मुझे विदेश भी भेजने को तैयार है।

गुटरी—वहाँ जाकर हमें भूल न जाना।

जमना—हुजूर, इस अखबार में किस खिलाड़ी की फोटो छपी है।

गुल्लू—वाह भई ! यह तो नन्दू की फोटो है। क्या गजब की फोटो है !

गुटरी—पोज भी बहुत बढ़िया है। एक बार पास मिलना चाहिए बस; फिर नहीं छोड़ता।

शम्भू—बिजली की माफिक दौड़ता है। क्या जादू है इसकी हॉकी में ! गेंद तो इसकी हॉकी से चिपक ही जाती है।

गुल्लू—कल Old Heroes ने तीन खिलाड़ी इसके साथ लगा दिए, पर मजाल है जो कोई गेंद छीन ले ! लाजवाब कैरी करता है।

शम्भ—जीओ नन्दू, जीओ। अगर तुम्हारा यही हाल रहा तो दोस्त अगले साल आल इण्डिया टीम में आ जाओगे।

गुटरी—तुम लोग फिर लाइन से उतर गए। बात तो हो रही थी पार्टी की ओर कहाँ पहुँच गए।

गुल्लू—यार, पार्टी भी ले लेना। पर एक काम तो करो।

शम्भू—मिलाओ हाथ! यह कही पते की बात! काम एक नहीं दो कहो, तुम्हारे लिए जान हाजिर है।

गुल्लू—क्यों भई, मेरी फोटो किसी तरह अखबार में नहीं छप सकती!

शम्भू—क्यों नहीं छप सकती! गधे, घोड़े और बैलों तक की फोटो छप जाती है, फिर तुम तो···

गुल्लू—मजाक छोड़ो।

गुटरी—क्या बात है? किसी डॉक्टर ने बताया है कि फोटो छपवाओ या सपने में किसी परी ने सलाह दी है!

गुल्लू—तुमसे क्या छिपाना? बात यह है कि परसों ही मेरी सगाई हुई है। अखबार में अगर मेरी फोटो छप जाय तो रोब जम जाएगा। मेरे होने वाले ससुर, मेरी होने वाली बीवी यानि कि अपनी लड़की की एक पत्रिका में छपी हुई फोटो मेरे पिताजी को दिखा रहे थे। अपनी भी छप जाय तब रहेगी बराबर की चोट।

शम्भू—हूँ तो ससुर साहब पर रोब गाँठना है फोटो छपवाकर!

गुल्लू—तुम लोगों की इतनी जान-पहचान है, कोई तरकीब सोचो।

गुटरी—मैं बताऊँ, तू किसी तरह हाकी के मैच में तीन गोल कर दे तो तेरी फोटो छप जाएगी।

शम्भू—तीन गोल तो यह एक ही तरह कर सकता है।

गुल्लू—कैसे?

शम्भू—सुबह चार बजे उठकर ग्राउण्ड में चला जा, तब कोई नहीं होगा। जितने जी चाहे गोल कर आना।

गुल्लू—तू फिर मजाक करने लगा ! मैं तो तुम्हें अपना जिगरी दोस्त समझकर कह रहा हूं।

गुटरी—मैं बताऊँ ! तू किसी अखबार को लिखकर भेज दे कि मैं पढ़ाई के लिए विदेश जा रहा हूँ। फिर फोटो छप जाएगी।

गुल्लू—नहीं भई, मेरे ससुर ने कहा है कि शादी के बाद दोनों को इंगलैण्ड भेज दूंगा।

शम्भू—आ गई।

गुल्लू—कौन ?

शम्भू—तरकीब।

गुल्लू—जल्दी बता।

शम्भू—अब यह तू मुझ पर छोड़ दे। अगले हफ्ते अखबार में तेरी फोटो न आई तो उस्ताद मूछें मुडवा दूंगा।

गुल्लू—मूछें तो तेरे है ही नहीं।

शम्भू—भई, विश्वास कर। मैं सच कहता हूँ अखबार में तेरी फोटो निकलवा दूंगा।

गुल्लू—पर कैसे ?

शम्भू—यह न पूछ। मेरा एक दोस्त है। अखबार का सम्वाद-दाता है। उसके मैंने कई काम किए हैं।

गुल्लू—कौन-से अखबार में ?

शम्भू—तुझे आम खाने से मतलब है या पेड़ गिनने से ! कह जो दिया कि फोटो अगले हफ्ते छप जाएगी। हां, बीस रुपए खर्च होंगे।

गुल्लू—बीस नहीं पचास खर्च हो जाएँ। परवा नहीं, पर फोटो छपनी चाहिए।

शम्भू—बस, तू बीस रुपए निकाल। इतने तो चाय पीने-पिलाने में लग जाते हैं। और जरूरत पड़ी तो देखी जाएगी।

गुल्लू—यह ले बीस रुपए। पर देख कहीं······

शम्भू—भई, वहम की तो कोई दवा नहीं। विश्वास हो तो ठीक

नहीं तो अपने रुपए अपने पास रख।

गुल्लू—तू तो नाराज हो गया।

शम्भू—नाराज होने की बात ही है। दस बार कह दिया कि फोटो छप जाएगी पर……

गुल्लू—अच्छा बाबा नाराज न हो। यह ले बीस रुपए।

शम्भू—अब कल शाम तक अपनी फोटो दे जाना।

गुल्लू—एक तो मेरी जेब में ही है। (जेब से फोटो निकालकर देता है)।

गुटरी—यह तो ठीक नहीं। इसमें तो मुंह चौड़ा-सा नजर आ रहा है।

शम्भू—मालूम होता है किसी चौड़े कैमरे से खींची गई है। कोई फड़कती हुई फोटो खिचवाओ, यार!

गुटरी—तुम्हारी फोटो, तुम्हारे ससुर देखेंगे, तुम्हारी वह भी देखेंगी। ऐसी फोटो होनी चाहिए जो वह अपनी सहेलियों को दिखाते न थके कि यह हैं मेरे बालम!

गुल्लू—तो और खिचवा लेते हैं। सूट में खिचवाऊँ…

शम्भू—वह नीला सूट जो पिछले साल सिलवाया था उसमें खिचवाओ।

गुल्लू—वह मैला है। धुलवाने में तीन-चार दिन लगेंगे।

गुटरी—तुम भी बस, यार, यूं ही हो! फोटो में तो मैला सूट और भी अच्छा आएगा।

गुल्लू—पोज भी कोई बढ़िया होना चाहिए।

गुटरी—जाते हुए सामने वाली दुकान से कोई सिनेमा की पत्रिका लेते जाना। उसमें एक-से-एक बढ़कर पोज होते हैं।

शम्भू—और हाँ Glazed paper पर फोटो लाना। दूसरे पेपर का अच्छा ब्लाक नहीं बनता।

गुटरी—अब तो पार्टी होनी चाहिए।

गुल्लू—फोटो छप जाए, तो वह बढ़िया पार्टी दूंगा कि याद रखोगे।

शम्भू—आज पार्टी की रिहर्सल ही हो जाए।

गुल्लू—मंगा लो यार, जो जी चाहे।

गुटरी—जमना !

जमना—आया, साहब।

गुटरी—ले आ एक-एक रसगुल्ला, दो-दो गुलाब-जामन और तीन-तीन रसमलाई। बोलो गुल्लू भाई !

गुल्लू—जिन्दाबाद !

शम्भू और गुटरी—गुल्लू भाई जिन्दाबाद !

[तीनों हँसते हैं]

दूसरा दृश्य

स्थान—वही रैस्टोरेंट

समय—एक सप्ताह बाद

[दृश्य परिवर्तन के लिए पर्दा गिराने की आवश्यकता नहीं। रंगमंच पर कुछ क्षण के लिए अंधेरा करने से ही काम चल सकता है। एक मेज पर गुल्लू अकेला बैठा हुआ सिगरेट पी रहा है।]

गुल्लू—जमना !

जमना—आया हुज़ूर !

गुल्लू—एक चाय ले आ।

जमना—क्या शम्भू बाबू भी आ रहे हैं ?

गुल्लू—नहीं भई, मैं तो सामने रीगल में पिक्चर देखने आया हूँ। अभी आधा घंटा बाकी है। सोचा यहीं बैठूं।

जमना—बड़ी लाजवाब पिक्चर है बाबूजी ! मिस बिल्लो ने कमाल कर दिया है। सुना है, हुज़ूर, हवाई जहाज से छलांग मारती है। और उसके गाने 'मैं बम्बई की रानी, नहीं भरूँगी पानी !' पर तो साहब दुनिया टूटती है।

गुल्लू—अच्छा, चाय ला । बातें न बना ।

[राकेश का प्रवेश]

राकेश—आप क्या किसी की इन्तजार कर रहे हैं ?

गुल्लू—मैं तो फिल्म देखने आया हूं ।

राकेश—कौन-सी ?

गुल्लू—'बम्बई की रानी !'

राकेश—क्या बजा है ?

गुल्लू—अभी तो छः बजे हैं ।

राकेश—पिक्चर तो साढ़े छः बजे आरम्भ होगी । अभी आध घंटा बाकी है ।

गुल्लू—जी ।

राकेश—आपने टिकट ले लिया है ? पहले ही सीट रिजर्व करवा ली होगी ?

गुल्लू—जी हां, मैं तो तीन दिन पहले ही सीट रिजर्व करवा गया था ।

राकेश—आप अकेले ही सिनेमा देख रहे हैं या किसी की इन्तजारी है ?

गुल्लू—वैसे तो पिक्चर का मजा अकेले नहीं आता पर आज तो अकेला ही देख रहा हूँ ।

राकेश—आपका नाम ?

गुल्लू—आप कौन हैं ? आखिर आप क्या चाहते हैं ?

राकेश—कुछ नही, कुछ नहीं । मैं भी पिक्चर ही देख रहा हूं । मैं भी बाहर अकेला था । आपका नाम गुलशन है न ?

गुल्लू—जी हां, आपको कैसे पता लगा ?

राकेश—आपके मित्र आपको गुल्लू भी कहते हैं ।

गुल्लू—जी हां ! क्या बात है, आप साफ-साफ क्यों नहीं बताते ?

राकेश—जरा अपनी कमीज का कालर तो हटाइए ।

गुल्लू—आप चलते-फिरते नजर आइए !

राकेश—हम तो आपको भी लेके चलेंगे।

गुल्लू—यह क्या बदतमीजी है !

राकेश—मैंने कहा न जरा बाहर चलिए।

गुल्लू—आप जाते हैं या नहीं ?

राकेश—नाराज न होइए। बाहर कुमारी सरस्वती आपकी प्रतीक्षा में खड़ी है।

गुल्लू—(**प्रसन्न होकर**) आप भी खूब मजाक करते हैं। पहले क्यों नहीं बताया ? मैं अभी चलता हूं।

[**कुमारी सरस्वती का प्रवेश**]

राकेश—लीजिए, वह आ गई।

गुल्लू—(**खड़े होकर**) नमस्ते।

सरस्वती—(**क्रोध से**) आपको शर्म नहीं आती !

गुल्लू—(**घबराकर**) क्या बात है ?

राकेश—यह देखिए अखबार में आपका फोटो छपा है। पढ़िए !

गुल्लू—(**अखबार पढ़ता है**) "खोए हुए व्यक्ति की तलाश—गुलशन उर्फ गुल्लू, उम्र २२ वर्ष, कद ५ फुट ६ इंच, रंग गंदमी, गरदन पर चोट का निशान, क्रिकेट और हाकी के खिलाड़ी, पिछले दो दिन से लापता हैं। जिन साहब को मिलें वह गुलजारीलाल उर्फ गुटरी को ४२०, लड्डू मंजिल, जलेबी चौक पर पहुंचा दें।

सरस्वती—आपने मुझे कहीं मुंह दिखाने काबिल नहीं रखा।

गुल्लू—कम्बख्त शम्भू ! मैं तुझसे निपट लूंगा। खूब फोटो छपवाई है मेरी !

[**सरस्वती और राकेश क्रोध से बाहर चले जाते हैं**]

गुल्लू—सुनिए तो, यह सब झूठ है।

जमना—हुजूर चाय !

★

समझौता

पात्र

राकेश	:	एक सरकारी कर्मचारी
निशा	:	राकेश की पत्नी
मुन्शी खादिमअली	:	तेल कम्पनी के एजेण्ट
माथुर साहब	:	राकेश का अफसर
सरला	:	माथुर साहब की पत्नी

[मध्यमवर्ग की एक साधारण बैठक जिसमें दो-चार कुर्सियां, मेज, रेडियो इत्यादि सजावट की वस्तुओं के अतिरिक्त एक पलंग या तख्त भी है। पर्दा उठने पर राकेश कुर्सी पर बैठा हुआ अपनी कमीज में बटन लगाता हुआ दिखाई देता है। अकस्मात् उसकी उंगली में सूई चुभ जाती है।]

राकेश—(उंगली को झटका देते हुए) हाय राम ! मित्रो ! (दर्शकों की ओर इशारा करते हुए) क्या बताऊँ ! सुबह सारा दिन दफ्तर में काम करो और शाम को घर आओ तो देखो कि श्रीमती जी अभी स्कूल से ही नहीं लौटीं। (अचानक चौंककर) हाय राम, यह तो कपड़ा जलने की बू आ रही है।

[राकेश अन्दर भाग जाता है। कुछ देर बाद निशा, जिसके एक हाथ में बटुआ और दूसरे में विद्यार्थियों की कापियां है, प्रवेश करती है। निशा कापियाँ एक मेज पर पटक देती है।]

निशा—धनिया ! ओ धनिया !

राकेश—(नेपथ्य से) आया बीबी जी !

[राकेश आता है, पर निशा दूसरी ओर मुंह होने के कारण उसे नहीं देखती।]

निशा—धनिया !

राकेश—जी बीबी जी !

निशा—(आश्चर्य से) ओह आप !

राकेश—धनिया तो इस समय अपने गाँव में होगा।

निशा—मैं तो भूल ही गई कि धनिया कल रात एक महीने की छुट्टी चला गया है।

राकेश—आप बन्दे को ही धनिया समझिए। कहिए, क्या हुक्म है ? एक गिलास पानी लाऊँ ?

निशा—रहने दीजिए, मैं खुद ही ले लेती हूँ।

[निशा अन्दर जाती है। राकेश कुर्सी पर बैठ जाता है।]

निशा—(नेपथ्य से) अजी सुनते हो !

राकेश—शुक्र है भगवान् का ! अभी तक तो सुनता हूँ।

[निशा का प्रवेश]

निशा—तुमने मुझे क्या समझ रखा है ?

राकेश—पिताजी की बहू, अपने भाई की भाभी और अपनी······

निशा—मुझे तुम्हारी यह आदत पसंद नहीं।

राकेश—और आदतें तो पसन्द हैं !

निशा—मैं पूछती हूँ खाली बैठे समय क्यों बरबाद कर रहे हो ?

राकेश—मैं तो इस समय मौज कर रहा हूँ।

निशा—ठीक है. काम करने के लिए मैं जो हूँ। सारा दिन नौकरानी की तरह जुटी रहती हूँ।

राकेश—जी हाँ, मुझे तो वेतन जैसे घर बैठे ही मिल जाता है।

निशा—हे भगवान् ! मुझे तो अब तू उठा ले।

राकेश—भगवान् को क्यों कष्ट देती हो ! मैंने जो सिर पर उठा रखा है।

निशा—अच्छा बाबा तुम जीते और मैं हारा। वकील के लड़के हो न। तुमसे कौन बहस करे !

राकेश—पर मैं तो तुम्हारे पिताजी की अक्लमन्दी की दाद देता हूँ जिन्होंने मेरे-जैसा दामाद ढूंढ लिया। अपने पिताजी तो इस मामले में बुद्धू ही रहे।

निशा—(क्रोध से) क्या कहा ? शर्म नहीं आती······

राकेश—क्षमा करना, मैं तो भूल ही गया था कि आज सुबह ही हम लोगों ने समझौता किया था कि आज नहीं लड़ेंगे।

निशा—पर तुम्हें तो बिना लड़े······

राकेश—(हाथ जोड़कर) ओहो, अब जाने भी दो। कोई और बात करो।

[क्षण-भर दोनों चुप रहते हैं]

राकेश—तुम्हारी सरलादेवी के क्या हाल-चाल हैं ?

निशा—किस चुड़ैल का नाम ले लिया आपने !

राकेश—क्यों, क्या आज बेंच पर खड़ा कर दिया उसने ?

निशा—बेंच पर क्या खड़ी करेगी ! पर माथे पर हर समय बल पड़े रहते हैं। मजाल है जो भूलकर भी हँसी आ जाए।

राकेश—खैर, छोड़ो भी।

निशा—एक महीना हुआ है अभी आए हुए, पर सबकी नाक में दम कर दिया है। जब शाम को छुट्टी की घण्टी बजती है तभी बुलाकर कुछ-न-कुछ काम दे देती है। खुद तो उसका घर जाने को जी नहीं करता और न किसी को जाने देती है।

राकेश—शादी हो चुकी है उसकी ?

निशा—क्यों, तुम्हें क्या ?

राकेश—**(झेंपते हुए)** कुछ नहीं, मैं तो यूं ही···

निशा—हाँ, है तो मिसेज सरला देवी, पर घर जाने का नाम ही नहीं लेती। घर में भी अपने पति से लड़ती होगी।

राकेश—हे भगवान, तेरा लाख शुक्र है कि अपनी बीवी हैड मिस्ट्रेस नहीं, केवल टीचर ही है।

निशा—असल में मर्द ऐसी ही औरतों से ठीक रहते हैं।

राकेश—लो, अब उसकी तारीफ भी होने लगी ! पर मैं कहता हूँ तुम उससे इतना डरती क्यों हो। उससे साफ-साफ क्यों नहीं कह देतीं कि मेरा नौकर चला गया है, मुझे घर जल्दी पहुँचना है।

निशा—आपको भी घर बैठे ही बातें बनानी आती हैं ! उस दिन कहा था कि एक घंटे की छुट्टी ले आना तो झट कह दिया था—'नया अफसर है, जरा सख्त है। उससे छुट्टी माँगने की हिम्मत नहीं पड़ती।'

राकेश—मैंने तो यह कहा था कि नया अफसर है, छुट्टी माँगना अच्छा नहीं लगता।

निशा—रहने दो, जितनी खुशामद तुम लोग अफसर की करते हो उतनी हम नहीं करतीं। उस दिन तुम्हारे अफसर की कार बिगड़ गई तो कह रहे थे कि एक मील तक धक्का लगाया। घर आकर हाय-तोबा मचा दी।

राकेश—नौकरी करना आसान काम नहीं, देवी जी! तुम्हें तो छः महीने में नानी याद आ गई। धन्य हम हैं जो दस साल से नौकरी कर रहे हैं।

निशा—(व्यंग्य से) आप अनोखे ही दुनिया में नौकरी करते हैं, और तो······

राकेश—खैर, हम तो नौकरी करेंगे ही, लेकिन अगर तुम्हारा जी न करता हो छोड़ दो।

निशा—कितनी जल्दी कह दिया छोड़ दो! मैं पढ़ाना छोड़ दूं तो दो दिन में आटे-दाल का भाव मालूम हो जाय।

राकेश—हर आदमी की बीवी तो नौकरी नहीं करती। उनका भी तो गुजारा होता है।

निशा—पर देखो इन छः महीने में ही घर का नक्शा बदल गया है—सोफा-सेट आ गया है, पर्दे लग गए हैं, तुम्हारे दो नए सूट भी सिल गए हैं।

राकेश—यह तो मानता हूं। तो कहता कौन है तुम नौकरी छोड़ो।

निशा—अभी तुम कह रहे थे।

राकेश—तुम जो रोज आकर यही कहती हो कि थक गई, मर गई, बहुत काम है। आज फिर हैडमिस्ट्रेस ने बिना बात डांट दिया। इस रोज की हाय-हाय से तो अच्छा है कि घर बैठो।

निशा—देखो, इस समय मेरा लड़ने का मूड बिलकुल नहीं है। मैं बहुत थकी हुई हूं।

राकेश—अपना भी बहस करने का मूड नहीं है। कोई और बात छेड़ो। (कुछ ठहरकर) अच्छा, चाय के बारे में क्या ख्याल है?

निशा—बहुत नेक ख्याल है।

राकेश—तो फिर अँगीठी जलाई जाय।

निशा—जरूर जलाई जाय।

राकेश—तुम तो ऐसे कह रही हो जैसे अंगीठी अपने-आप सुलग जाएगी।

निशा—सचमुच धनिया के बिना तो बड़ी मुश्किल से दिन गुजरेंगे।

राकेश—सत्य वचन देवी जी!

निशा—ऐसा करो, अंगीठी जलाकर चाय का पानी तुम रख दो। चाय मैं बना दूंगी।

राकेश—(**व्यंग्य से**) आप इतना कष्ट करें यह मैं नहीं देख सकता। अंगीठी आप जला दीजिए, चाय मैं बना दूंगा।

निशा—मैं आज बहुत थकी हुई हूँ। तुम स्टोव में तेल डलवा लाओ।

राकेश—तेल की दुकान तो बहुत दूर है।

निशा—कई बार तुम्हें कहा कि इकट्ठा तेल ले आया करो।

राक़ेश—खैर, आज तो बहस न करने की कसम खा ली है इसलिए मैं कुछ नहीं कहता।

निशा—हीटर भी खराब पड़ा है। वह भी न बनवाया गया तुमसे।

राकेश—आओ, लाटरी डाल लें। दो पर्चियाँ बनाओ। जिसका नाम निकल आए वही चाय बनाए और दूसरा अंगीठी जलाए।

निशा—ठीक है, बनाओ पर्चियाँ।

[**राकेश एक कागज के दो टुकड़े करके उन पर अपना और निशा का नाम लिख देता है और फिर उनकी गोलियाँ-सी बना लेता है।**]

निशा—कहीं दोनों पर्चियों पर मेरा नाम ही न लिख देना!

राकेश—देवी जी, मैं आपकी तरह···खैर, उठाओ पर्ची।

निशा—यह लो। (**एक पुड़िया उठाती है**)।

राकेश—(**पुड़िया खोलकर नाम पढ़ते हुए**) यह मारा! लो, तुम्हारा नाम ही अंगीठी जलाने के लिए निकला। आखिर भगवान् ने बिलकुल

ठीक इन्साफ कर दिया। उसे पता है कौन-सा काम कौन कर सकता है।

निशा—(खिसियाकर) मैं तो मजाक कर रही थी। मैं तो देखना चाहती थी कि पतिदेव किस तरह अंगीठी जलाते हैं। मैं तो पांच मिनट में अंगीठी जला दूंगी।

[निशा चली जाती है]

राकेश—(गाते हुए)

धनिया, तेरी याद सताए,
चाय बनानी जब पड़ जाए।
आ जा धनिया, वापस आ जा।
आकर हमारी आग जला जा।

निशा—आ चुका धनिया ! लो, कोयला भी खतम है। मुआ चीनी और घी भी खतम करके गया है।

राकेश—भई, आज की तारीख में अपनी किस्मत में फाका ही लिखा है।

निशा—चलो, आज बाहर ही चाय पीएंगे और बाहर ही खाना खाएंगे। रास्ते में कोयले वाले को सुबह कोयला भेजने के लिए भी कह देंगे।

राकेश—नेकी और पूछ-पूछ। पर···

निशा—पर क्या ?

राकेश—मेरा मतलब है कि···

निशा—मैं सब समझती हूं। तुम टाई लाने के लिए भी तो कह रहे थे। चलो, वह भी ले आना।

राकेश—क्या आज कहीं से मनीआर्डर आ गया है।

निशा—पिछले इम्तहान में जो मैं सुपरवाइजर लगी थी, उसका आज यूनिवर्सिटी से मनीआर्डर आया है।

राकेश—(प्रसन्न होकर) तो पहले क्यों नहीं बताया ! मुफ्त में इतनी देर परेशान हुए। (खुशामद करते हुए) तुम सचमुच थक गई होगी। सारा दिन खड़े रहना पड़ता है। तुम धन्य हो जो इतना काम

करती हो। स्कूल का सारा काम और फिर घर की देख-भाल। मेरी एक और सलाह है।

निशा—क्या ?

राकेश—लगे हाथ पिक्चर भी देख ली जाय।

निशा—कौन-सी ?

राकेश—मियां-बीबी। उसी का तो यह गाना है—

[गाकर]

आओ मिलकर हाथ बटाएँ।
दोनों अपने काम पर जाएँ।

[दोनों एक साथ]

दोनों खर्चें, दोनों कमाएँ।
आनन्द करें और मौज उड़ाएँ।

[दोनों हँसते हैं]

राकेश—(**कुर्सी पर बैठते हुए**) हाय राम !

निशा—(**घबराकर**) क्यों, क्या हुआ ?

राकेश—लो, मैं तो बताना ही भूल गया। आज तो मेरे अफसर ने कहा था कि भई तुम्हारी तरफ मुझे एक दोस्त के जाना है। समय मिला तो तुम्हारे यहाँ भी आऊंगा।

निशा—हमारी हैडमिस्ट्रेस ने भी कहा था कि मुझे तुम्हारी तरफ जाना है। मैंने तो यूं ही कह दिया कि हमारे यहाँ भी आइयेगा तो बड़े नखरे से कहने लगी, "समय मिला तो आने की कोशिश करूँगी।"

राकेश—यह तो बना-बनाया खेल बिगड़ गया।

निशा—बिगड़ क्या गया ! हम लोग चलते हैं। ताला देखकर अपने आप वापस चले जाएँगे।

राकेश—मेरे अफसर ने तो कहा था कि मैं जरूर आऊँगा। वह आया तो ताला लगा देखकर बहुत भिन्नाएगा। हम लोगों ने सैकिण्ड शो देखना है।

निशा—पर उनके लिए तो कुछ-न-कुछ बनाना ही पड़ेगा। खाना नहीं तो चाय तो बनानी ही पड़ेगी।

राकेश—हां, यह तो सोलह आने सच है।

निशा—(सोचकर) मैं बताऊँ, उसे ठण्डी लेमन की बोतल पिला देना।

राकेश—आज तो लच्छू की दुकान भी बन्द है। बोतल भी तो बाजार से लानी पड़ेगी।

निशा—मेरी हैडमिस्ट्रेस तो शायद ही आए। खैर, मुझे उसकी परवा नहीं। मैं कहती हूँ ताला लगाओ और चलो। देखा जाएगा जो होगा।

राकेश—तुम्हें क्या ! जो होगा वह तो मुझे भुगतना पड़ेगा।

निशा—उस समय तो बड़े तीस-मारखां बन रहे थे। कहते थे, तुम इतना क्यों डरती हो !

राकेश—अच्छा बाबा, तुम जीती मैं हारा। बातें बनाने का वक्त नहीं है। मैं बाजार जाता हूं। आज तो ऐसी खातिर कर दो मेरे अफसर की जो फिर कभी छुट्टी मांगू तो मना न करे।

निशा—मुझसे आज कुछ नहीं होगा।

राकेश—ऐसा न कहो। तुम्हारी हैडमिस्ट्रेस आएगी तो सारा काम मैं कर दूंगा। तुम आराम से उसके पास बैठी रहना।

निशा—उसने कितने बजे आने को कहा था ?

राकेश—सात बजे।

निशा—तुम्हारी तो अकल मारी गई है ! पचीस मिनट में क्या बाजार से लौट आओगे ?

राकेश—हे भगवान् ! अब क्या करूँ ?

निशा—मैं बताऊँ, तुम चादर ओढ़कर लेट जाना। मैं कह दूंगी कि इनकी तबीयत खराब है। वह एक-दो मिनट बैठेगा और अपने आप चला जाएगा। कल की भी अर्जी भिजवा देना।

राकेश—ठहरो, जरा सोचने दो······वह मारा ! सुनो, क्या तरकीब सूझी है ! वाह ! वाह ! वाह !

निशा—क्या ?

राकेश—तुम्हें भगवान् का धन्यवाद करना चाहिए कि उसने तुम्हें मुझ-जैसा बुद्धिमान पति दिया। सच कहता हूँ, एक तुम ही कदर नहीं करतीं नहीं तो सब यार-दोस्त अपनी अकल की धाक मानते हैं।

निशा—अब कुछ कहोगे भी !

राकेश—सुनो, जब मेरा अफसर आए तो तुम बीमार बनकर लेट जाना। मैं कहूँगा, 'साहब, मैं आपके लिए चाय बनाता हूँ। इनकी तो तबीयत खराब है !' और यदि तुम्हारी हैडमिस्ट्रेस आ जाए तो मैं लेट जाऊँगा। कहो, कैसी कही ! दोनों ही जल्दी भाग जाएँगे और हम लोग··

निशा—ठहरो, जरा सोचने दो।

राकेश—समस्या का यह ऐसा हल है मैडम, कि आप मुझे सौ में सौ नम्बर दे सकती हैं।

निशा—है तो कुछ ठीक।

राकेश—तो फिर हो गया समझौता।

[**दरवाजे पर दस्तक की आवाज**]

राकेश—मालूम होता है वह आ गया है। तुम यहीं चारपाई पर लेट जाओ और यह चादर ओढ़ लो।

निशा—मैं दूसरे कमरे में लेट जाती हूँ।

राकेश—नहीं भई, तुम यहाँ लेटी होगी तो वह दो-चार मिनट में ही भाग जाएगा, नहीं तो पता नहीं कितनी देर में उठे।

[**निशा जल्दी से चारपाई पर लेट जाती है। राकेश दरवाजा खोलता है। मुन्शी खादिमअली सुरमेदानवी अन्दर आते हैं। उनकी आयु लगभग ४५ वर्ष है। अचकन और तंग मोरी का पाजामा पहने हुए हैं। एक हाथ में छड़ी है और दूसरे में एक पुराना चमड़े का बैग। ऐनक**

लगाए हैं, सिर पर कश्मीरी टोपी है।]

मुन्शी—आदाव-अर्ज।

राकेश—आदाव-अर्ज।

मुन्शी—जहे-किस्मत, आप घर पर मिले तो सही। मैं पहले भी आपके दरे दौलत पर हाजिर हो चुका हूँ, पर बदकिस्मती से आपका नियाज हासिल नहीं हो सका।

राकेश—फरमाइए।

मुन्शी—आपके कीमती वक्त के दो-चार मिनट जाया करने की इजाजत चाहता हूँ। हुक्म हो तो अर्ज करूँ।

राकेश—जी आइए बैठिए।

मुन्शी—नमस्ते बहन जी।

राकेश—नमस्ते।

मुन्शी—दुश्मनों की तबीयत कुछ अलील है। (निशा चारपाई से उठने लगती है) आप लेटे रहिए।

निशा—नहीं, मैं ठीक हूँ। यूँ ही जरा सिर दर्द कर रहा था।

मुन्शी—हां साहब तो खाकसार को खादिमअली सुरमे-दानवी कहते हैं।

राकेश—सुरमे-दानवी !

मुन्शी—(हँसकर) जी हां, आप हैरान तो होंगे। जो भी पहली मरतबा मेरा नाम सुनता है ताज्जुब करने लगता है। आप पूछेंगे यह नाम क्योंकर पड़ा, मैं खुद ही बता देता हूँ। बात यह है कि मेरे दादा के दादा के दादा···खुदा उन्हें जन्नत नसीब करे···वह सुरमा बनाते थे कि एक बार तो अन्धी आँखों में भी रोशनी आ जाती थी, फिर चाहे चली जाय। एक मरतबा शहंशाह अकबर के नौ रत्नों में से एक की आँख में तकलीफ हो गई। बस···

राकेश—जी मैं समझ गया।

[निशा छींकती है]

मुन्शी—ये छींकें भी खूब हैं, साहब। आदमी की जान लेकर छोड़ती हैं। क्या आपको सिरदर्द की आम शिकायत रहती है ?

निशा—कभी-कभी हो जाता है।

मुन्शी—और साथ में छींकें भी आती हैं। खुदा आपको सेहत बख्शे। यह दर्द पुराना हो जाय तो बस जी का जंजाल बन जाता है।

राकेश—आप क्या हकीम हैं ?

मुन्शी—नहीं, साहब, नहीं। न मैं हकीम हूँ, न वैद्य। (**खांसने लगता है**) आपको जहमत न हो तो नाचीज को एक गिलास पानी…

निशा—अभी लाती हूँ। (**अन्दर जाती है**)।

राकेश—कहिए तो चाय…

मुन्शी—(**प्रसन्न होकर**) चाय ! बात यह है कि……

[**निशा पानी का गिलास लेकर आती है**]

निशा—बहुत अच्छा है आप चाय नहीं पीते। चाय तो नुकसान करती है। लीजिए, पानी लीजिए।

मुन्शी—शुक्रिया ! क्या आप लोग कतई चाय नहीं पीते ?

निशा—जी नहीं।

मुन्शी—(**निराश होकर**) ताज्जुब है ! आजकल तो हर घर में चाय का होना उतना ही जरूरी समझा जाता है जितना नमक और हल्दी का। आपके जब मेहमान आते हैं तो…

निशा—उन्हें पता है हम लोग चाय नहीं पीते।

मुन्शी—(**गिलास से थोड़ा पानी पीकर**) आपका घड़ा भी रैफरीजेटर को मात कर रहा है। वल्लाह ! क्या ठण्डा पानी है ! मजा आ गया।

राकेश—कहिए आप कैसे तशरीफ लाए ?

मुन्शी—बस, कुछ न पूछिए, साहब। हवाई अड्डे तक तो बस मिल गई, उसके बाद तो साहब बड़ी देर खड़ा रहना पड़ा, कोई सवारी नहीं मिली। खरामा-खरामा ही आना पड़ा। पर मैंने भी आज कसम खाई थी, कि आज तो आपके नियाज हासिल करके ही जाऊँगा।

राकेश—मेरा मतलब है मैं आपकी क्या खिदमत कर सकता हूं ?

मुन्शी—लाहोल-बिला-कुव्वत ! खादिम तो मैं हूं। मैं बातों बातों में भूल ही गया। (बैग में से एक शीशी निकालकर) बहन जी, आप इस तेल की मालिश कीजिए और फिर देखिए यह दर्द कैसे गायब होता है।

निशा—आप रहने दीजिए। कुछ देर बाद अपने-आप ठीक हो जाएगा।

मुन्शी—अजी, आप तो तकल्लुफ कर रही हैं। एक बार आजमा कर तो देखिए।

राकेश—यह तेल कैसा है ?

मुन्शी—इसे अमृत-तेल कहते हैं। बालों के लिए, सिर दर्द के लिए, निगाहों के लिए यह अमृत है अमृत !

राकेश—आपको यह कहां से मिला ?

मुन्शी—ऐसी नायाब चीज खुशकिस्मती से ही मिलती है। यह संजीवन बूटी के कुनबे में से एक बूटी है जिससे यह तैयार किया जाता है। यह बूटी हिमालय पहाड़ पर १३,००० फिट की बुलन्दी पर पाई जाती है।

राकेश—इस बूटी को कौन तोड़ता होगा ?

मुन्शी—कुछ न पूछिए। आजकल साइंस जो करे सो थोड़ा है। हैली-कोप्टर से हिमालय की इस बूटी को तोड़ा जाता है। पिछले दिनों में तो यह खबर सुनने में आई थी कि कुछ साइंसदां इस बूटी की खातिर हिमालय पर्वत ही खरीदने को तैयार हैं।

राकेश—आप तो खूब दिलचस्प आदमी मालूम होते हैं !

मुन्शी—तारीफ तो इस बूटी की है। हाथ कंगन को आरसी क्या और पढ़े-लिखे को फारसी क्या ! आप जरा लगाइए तो सही और फिर देखिए इसका कमाल। चन्द लहमों में आपका सिर-दर्द गायब हो जाएगा, आपका दिमाग ताजा हो जाएगा, आंखों में ठंडक पहुँचेगी।

राकेश—मेरा मतलब है आपको यह तेल कहां से मिला ?

मुन्शी—यह भी एक किस्सा है। एक दिन मेरा सिर दर्द के मारे फटा जा रहा था और मैं चारपाई पर लेटा खर्राटे मार रहा था कि इतने में मेरे एक दोस्त इसकी एक शीशी लाए। उन्होंने इत्तफाक से यह शीशी मेरे सिर पर रख दी। फिर क्या कहने ! मेरा दर्द गायब हो गया और मेरी आँख खुल गई।

राकेश—(**व्यंग्य से**) दर्द के मारे आपकी आँख लग गई और दर्द गायब होते ही···

मुन्शी—शायद मैं कुछ गलत कह गया। बात यह है कि···

राकेश—मैं समझ गया। अब आप कहिए कि आपने कैसे तकलीफ की ?

मुन्शी—तकलीफ कैसी ! मैंने अभी अर्ज किया था कि मुझे लोग खादिमअली सुरमेदानवी कहते हैं। बस यूँ जानिए कि मैं सबका खादिम हूँ। ओह बहन जी, आपने तेल अभी तक नहीं इस्तेमाल किया। खैर, आप यह शीशी रखिए और इसका कमाल देखिए।

राकेश—यह शीशी··

मुन्शी—अजी, इसे आप रखिए।

राकेश—मेरा मतलब है आपको मुझसे क्या काम है ?

मुन्शी—मुझे साहब कोई गरज नहीं। किसी ने ठीक कहा है कि खुदा की सबसे बड़ी इबादत उसके बन्दों की खिदमत है। मैं बाल बढ़ाने का, सिर-दर्द मिटाने का, जुकाम दूर भगाने का, आँखों को तरावट पहुँचाने का यह नुस्खा घर-घर बांटता फिरता हूँ। आप यह छोटी शीशी रखिए।

राकेश—अच्छा तो इसे रहने दीजिए।

मुन्शी—खुदा आपका भला करे। आप इसके सिर्फ आठ आने इनायत फरमाइए।

राकेश—आप इस तेल की कम्पनी के ऐजण्ट हैं ?

मुन्शी—लाहोल-विला-कुव्वत ! मैं तो खिदमत करता हूँ आप

लोगों की ओर अमृत तेल कम्पनी की।

राकेश—इन्हें आठ आने दे दो।

निशा—मेरे पास टूटे पैसे नहीं हैं। दो का नोट है।

मुन्शी—रेजगारी नहीं है तो न सही। मैं आपको दो रुपए वाली बड़ी बोतल दे देता हूँ।

निशा—रहने दीजिए, मिल गई अठन्नी।

मुन्शी—शुक्रिया ! आदाब-अर्ज ! (जाता है)।

[**राकेश जोर से दरवाजा बन्द करता है**]

राकेश—हे भगवान, बला टली।

निशा—अब यह घर-घर इश्तहारबाजी करने का अच्छा रिवाज चल पड़ा है।

राकेश—कुछ दिनों में तो ये इश्तहार वाले रात को जगाकर इश्तहार पढ़वाया करेंगे।

निशा—बातें कैसी बना रहा था !

राकेश—ये लोग बातों की ही तो खाते हैं।

[**दरवाजा खटखटाने की आवाज**]

राकेश—मैं दरवाजा खोलता हूँ। (**राकेश दरवाजे तक जाता है और फिर लौट आता है**) उठो, उठो, यह तो तुम्हारी हैडमिस्ट्रेस लगती है। मैं लेटता हूँ, तुम दरवाजा खोलो।

निशा—मैं कहती हूँ वह नहीं है।

[**दरवाजा खटखटाने की आवाज**]

राकेश—नहीं भई, मुझे तो ऐसा लगता है कि दरवाजा खटखटाने वाला जनाना हाथ है।

निशा—यह कैसे जाना ?

राकेश—दरवाजा खटखटाने के साथ उसकी चूड़ियों की भी आवाज आ रही है।

निशा—वह चूड़ियाँ नहीं पहनती।

राकेश—अच्छा इस बार ध्यान से सुनना। (दोनों बड़ी उत्सुकता से दरवाजा खटखटाने की प्रतिक्षा करते है)।

[दरवाजा खटखटाने की आवाज]

राकेश—सुना तुमने ?

निशा—खाक सुना ! जाकर दरवाजा खोलो। देखो तो सही कौन है।

[राकेश दरवाजा खोलता है। नेपथ्य में कुत्ते के भौंकने की आवाज]

राकेश—धत्त तेरे की !

[निशा जोर से हँसती है]

निशा—तो यह है तुम्हारा अफसर !

राकेश—जी नहीं, तुम्हारी हैडमिस्ट्रेस !

[दरवाजा खटखटाने की आवाज]

माथुर—मिस्टर राकेश !

राकेश—आया सर !

[राकेश दरवाजे की तरफ जाता है। निशा चारपाई पर लेट जाती है। मिस्टर माथुर अन्दर आते हैं।]

राकेश—नमस्ते जी, आइए, आइए बैठिए। (निशा से) यह हैं मिस्टर माथुर, हमारे नए मैनेजर।

माथुर—(निशा से) नमस्ते।

निशा—नमस्ते। हम लोग आपकी ही राह देख रहे थे।

माथुर—हमारे एक रिश्तेदार इधर ही रहते हैं। उनके यहाँ आया था। सोचा, यहाँ भी होता चलूँ।

निशा—बड़ी कृपा की आपने।

माथुर—मेरे साथ मेरी वाइफ भी आई हैं।

निशा—आप उन्हें नहीं लाए ?

माथुर—वह वहीं गप्पों में लगी हैं।

राकेश—उन्हें भी साथ लाते तो बहुत अच्छा रहता।

निशा—अब के आप आएँ तो उन्हें जरूर साथ लाइएगा। मुझे उनसे मिलकर बड़ी खुशी होगी।

निशा—(कराहते हुए) जरा पानी दीजिएगा।

राकेश—मैं अभी लाया।

[राकेश अन्दर चला जाता है]

माथुर—आपकी क्या कुछ तबीयत खराब है?

निशा—जी हाँ।

माथुर—क्या बात है?

निशा—कुछ कमर में दर्द है।

माथुर—बुखार भी है?

निशा—बुखार तो नहीं है।

राकेश—(आता है) यह लो पानी।

माथुर—इन्हें कब से तकलीफ है?

राकेश—अभी शाम को स्कूल से आईं कि सिर में दर्द हो गया। बुखार भी है।

निशा—(घबराकर) दर्द सिर से शुरू हुआ था। अब तो कमर में दर्द है।

माथुर—आप भी क्या कहीं काम करती हैं?

राकेश—जी हां, यह स्कूल में टीचर हैं।

माथुर—ठीक है, आजकल जब तक मियाँ-बीवी दोनों न कमाएँ गुजारा नहीं चलता। आपको चाहिए कि घर के काम के लिए कोई नौकर रख लें।

राकेश—नौकर तो है। वह कल ही छुट्टी गया है।

माथुर—घर का सारा काम करना, और फिर छः घंटे स्कूल में पढ़ाना, यह बड़ा कठिन होगा।

राकेश—घर के काम से तो यह नहीं डरतीं पर स्कूल में आजकल इनकी नई हैडमिस्ट्रेस की इन पर विशेष कृपा है!

निशा—औरत क्या है, अफलातून है !

राकेश—पाँच बजे छुट्टी हो जाती है पर छः-सात से पहले नहीं छोड़ती।

माथुर—कई औरतें बड़ी बेढब होती हैं। वह शादी-शुदा है ?

राकेश—जी ! उसके पति पर तो न-जाने क्या गुजरती होगी।

निशा—वह तो हम सब से कहती है कि उसने अपने पति के नकेल डाल रखी है। मजाल है जो बोल जाय !

माथुर—ऐसी औरत से तो भगवान् बचाए। आप दो-चार दिन आराम कीजिए।

निशा—वह छुट्टी कहाँ देती है !

माथुर—मिस्टर राकेश ! आप एक-दो दिन की छुट्टी कीजिए, तब तक इनकी तबीयत ठीक हो जाएगी।

राकेश—जी नहीं, मैं कल दफ्तर आऊँगा।

माथुर—आप दफ्तर की चिन्ता न कीजिए।

निशा—आप बैठिए तो सही।

राकेश—माफ कीजिए, मैं बातों-बातों में भूल ही गया। आप चाय पीएँगे या कॉफी ?

निशा—आप स्टोव जलाकर पानी तो उबलने रख दीजिए।

माथुर—नहीं भई, नहीं। मैं कुछ नहीं पीऊँगा।

राकेश—यह कैसे हो सकता है ! आप पहली बार हमारे यहाँ आए हैं, कुछ तो सेवा का मौका दीजिए।

माथुर—अभी तो आप इनकी सेवा कीजिए।

निशा—मेरी तबीयत अगर ठीक होती तो बिना खाना खिलाए न जाने देती। इस दर्द को भी आज ही होना था।

माथुर—जब आप अच्छी हो जाएँगी तो फिर कसर निकाल लूंगा।

निशा—अब जब आप आएँ तो बहनजी को जरूर साथ लाइएगा।

माथुर—अच्छा नमस्ते।

निशा—नमस्ते। (उठने की कोशिश करती है)।

माथुर—आप लेटी रहिए। अच्छा राकेश, तुम कल दफ्तर से छुट्टी करना।

राकेश—थैंक्यू सर। नमस्ते।

माथुर—नमस्ते।

[मिस्टर माथुर चले जाते हैं। राकेश दरवाजा बन्द कर लेता है]

निशा—यह तो बहुत शरीफ आदमी लगता है। तुम तो यूं ही इस की बुराई करते हो।

राकेश—यह तो सब तुम्हारा लिहाज था।

निशा—तुम्हारी तो कल की छुट्टी भी मंजूर हो गई। कल कोयला, चीनी वगैरा ले आना और मेरे आने तक अंगीठी जला लेना और सब्जी बना लेना। मैं आकर चपातियां तंदूर से लगवा लूंगी।

राकेश—कल की कल देखी जाएगी। अब चलो, देर हो गई है।

निशा—अच्छा चलो। ख्याल है अब वह नहीं आएगी।

राकेश—अब बातें न बनाइए, मैडम जी और जल्दी चलिए।

निशा—बस, मुंह-हाथ धो लूं। अभी आई।

राकेश—तुम तो तैयार थीं।

निशा—बिस्तर पर लेटने से सब खराब हो गया।

राकेश—जितनी देर औरतें तैयार होने में लगाती हैं उतनी देर में…

[दरवाजा खटखटाने की आवाज]

राकेश—लो, तुम्हारी वह भी आ गई।

निशा—(गुस्से में) सत्यानाश हो इसका! (हंसकर) अभी आई। तुम जल्दी से लेट जाओ और हाय-हाय करने लगो। देखो, मैं कितनी जल्दी इसे चलता करती हूं। (राकेश लेट जाता है) यूं नहीं, अच्छी तरह लेट जाओ।

[निशा दरवाजा खोलती है। सरला अन्दर आती है]

निशा—नमस्ते। आइए। यह हैं मेरे पति।

राकेश—नमस्ते। बैठिए।

सरला—नमस्ते।

राकेश—हम लोग आपकी ही राह देख रहे थे।

निशा—मैंने सुबह बोला था टाइम मिलेगा तो आऊँगी। इधर मैं अपने एक रिश्तेदार के आई थी।

राकेश—बड़ी कृपा की आपने।

सरला—यह तो हमारा कर्तव्य है।

राकेश—निशा आपकी बहुत तारीफ किया करती है।

सरला—मैंने कभी किसी को नुकसान नहीं पहुँचाया। हाँ, कोई टीचर गलती करती है तो मैं रिपोर्ट जरूर कर देती हूँ।

निशा—जब से आप आई हैं स्कूल की हालत बदल गई है।

सरला—अभी तो स्कूल में बहुत गड़बड़ है। धीरे-धीरे सब ठीक कर दूंगी।

निशा—आजकल की लड़कियाँ भी बहुत शैतान हैं। परसों मिस वर्मा ने एक लड़की से कहा, 'अगर मैं तेरी माँ होती तो मैं तुझे चार दिन में ठीक कर देती।' वह बोली, 'मैं कल पिताजी से पूछकर बताऊँगी।'

सरला—मैं सबको सीधा कर दूंगी।

राकेश—देखो पानी उबल गया हो तो गरम पानी को बोतल में डाल दो।

सरला—आप क्या···

राकेश—मेरी तबीयत खराब है। कमर में दर्द हो रहा है।

सरला—आप कब से बीमार हैं?

निशा—कल से बुखार है।

सरला—दिन में आपकी कौन देखभाल करता है?

निशा—कोई नहीं। पहले तो मैंने सोचा था आज की छुट्टी ले लूं, पर फिर सोचा कि स्कूल का हर्ज होगा। मिस बंटो पहले से ही छुट्टी पर हैं।

सरला—मैं तुमसे बहुत खुश हूँ। तुम लोग तो नौकर भी रख सकते हो।

निशा—नौकर तो है। पर कल से एक महीने की छुट्टी चला गया है।

सरला—मिस्टर राकेश, आपको चाहिए कि जब तक आपका नौकर छुट्टी पर है तब तक आप दफ्तर से छुट्टी ले लें।

निशा—इनका साहब तो बहुत खराब है। कभी छुट्टी नहीं देता।

राकेश—हम लोगों को छुट्टी बड़ी मुश्किल से मिलती है।

निशा—इनका नया अफसर आया है। उसने तो नाक में दम कर दिया है। इनसे काम भी बहुत लेता है। आपने क्या कहूँ, दफ्तर में इनके साथ दो-तीन लड़कियाँ भी हैं। इनका अफसर उन लड़कियों से तो गप्पें लड़ाता रहता है, और उनका काम इनको देता है। शाम को बड़ी देर तक बैठा उनसे बातें करता रहता है।

सरला—तब तो बहुत खराब है।

निशा—आदमी बहुत धोखेबाज होते हैं।

राकेश—जी हाँ। (**सोचकर**) जी नहीं।

[**दरवाजा खटखटाने की आवाज**]

राकेश—देखना कौन है।

सरला—अच्छा मैं चलती हूँ।

राकेश—आप बिना चाय पिए कैसे जा सकती हैं।

सरला—नहीं, मैं लेट हो गई हूँ।

राकेश—निशा, वह जो तुमने गर्म बोतल के लिए पानी रखा है, उसी से चाय बना दो।

[**दरवाजा खटखटाने की आवाज**]

निशा—आप लेटे रहिए। मैं देखती हूँ कौन है। (**दरवाजा खोलती है। मिस्टर माथुर अन्दर आते हैं**) कौन आप !

माथुर—माफ कीजिए, मैं अपनी ऐनक यहाँ भूल गया।

निशा—मैं अभी देखती हूँ।

माथुर—आपकी तो तबीयत खराब थी···

निशा—जी हाँ, बात यह है कि···

सरला—(**चौंककर**) तुम यहाँ भी आ पहुँचे। तुम्हें कैसे पता लगा कि मैं यहाँ हूँ।

माथुर—तुम तो कह रही थीं तुम्हें अपनी एक टीचर के जाना है।

सरला—निशा हमारे स्कूल में टीचर है। पर तुम कहाँ मारे-मारे फिरते हो?

राकेश—और आप हमारी कम्पनी के मैनेजर है। बड़े शरीफ आदमी हैं।

सरला—(**व्यंग्य से**) शरीफ आदमी हैं! (**क्रोध से**) आज तुम्हारी पोल खुल गई। मुझे सब पता लग गया कि तुम दफ्तर में क्या करते रहते हो?

निशा—मैंने तो यह कहा था······

सरला—तुम चुप रहो!

माथुर—मुझे भी पता लग गया है। तुम मुझे क्या समझती हो!

राकेश—जी, वह तो···

माथुर—आप चुप रहिए! सचमुच इन्होंने मेरी नाक में दम कर दिया है।

सरला—क्यों यहाँ पर मेरा मुँह खुलवाते हो!

माथुर—कुछ ठौर-ठिकाना तो देख लिया करो।

सरला—अपनी नहीं कहते!

माथुर—अब चलो भी!

[कुछ देर तक दोनों के लड़ने की आवाज आती रहती है जो फिर धीरे-धीरे लुप्त हो जाती है। निशा और राकेश जोर से हँसते हैं।]

निशा—मियाँ-बीवी का एक दृश्य तो यहाँ ही देख लिया।

राकेश—मैं तो घबरा गया था। पर इनकी आपस की लड़ाई से अपनी पोल नहीं खुली, नहीं तो आज दोनों की नौकरी खतरे में पड़ गई थी।

[दोनों हंसते हैं]

★

किराये के आँसू

पात्र

रमेश	:	एक आवारा नवयुवक
बांकेलाल	:	नौटंकी और पुराने पारसी थियेटर का एक अभिनेता
सुरेन्द्र	:	रमेश का अफसर
पानवाला आदि		

28388

[रंगमंच के बीचोंबीच एक लकड़ी की दीवार है। इसके बाईं तरफ दीवार के साथ कमरा बना दिया गया है। इस कमरे के पीछे की दीवार केवल पर्दे से भी बनाई जा सकती है। यह कमरा आधुनिक ढंग से सजा हुआ है जिसमें सोफा-सेट, रेडियो, अलमारी, मेज, बुक-शैल्फ इत्यादि करीने से लगाए गए हैं। कमरे के अन्दर आने का दरवाजा पीछे वाली दीवार या परदे के साथ ही है। रंगमंच का दायाँ भाग एक आम रास्ता है जिसके अगले भाग में एक लैम्प-पोस्ट है जिसके पास एक पान वाला अपना छोटा-सा बक्स लेकर बैठा है।

पर्दा उठने पर रमेश नकली सफेद दाढ़ी लगाए हुए एक बूढ़े का वेष धारण कर पान वाले के पास इधर-उधर घूम रहा है। उसे देखकर ऐसा लगता है मानो वह किसी बड़ी समस्या में उलझा हुआ है।]

रमेश—(अचानक पान वाले की तरफ देखकर) भई, एक पान लगाना।

पानवाला—कैसा पान खाएँगे ?

रमेश—देसी पान। इलायची और सौंफ डाल देना।

[इतने में बांकेलाल पीछे से आकर पान वाले के पास खड़ा हो जाता है। बांकेलाल गहरे लाल रंग की कमीज और खाकी पतलून में है। एक मफलर गले के चारों तरफ लपेट रखा है।]

रमेश—(बांकेलाल को पहचानते हुए) ओह! आप! पान खाएँगे ?

बांकेलाल—(लापरवाही से) बनारसी पान। लो बोलो! चूना ज्यादा और जरा जरदा भी डाल देना।

रमेश—(पान पकड़ाते हुए) यह लीजिए। सिगरेट ?

बांकेलाल—वह १४ आने पैकेट वाली एक ले लीजिए।

रमेश—(पानवाले से) दो बढ़िया सिगरेट देना।

[रमेश पान वाले से सिगरेट लेकर एक बांकेलाल को दे देता है

ग्रौर दियासलाई से बांकेलाल की सिगरेट जलवा देता है। बांकेलाल सिगरेट जलाकर जाने लगता है मगर एक-दो कदम चलने के बाद रुक जाता है।]

बांकेलाल—शुक्रिया। मगर माफ कीजिए, मैंने ग्रापको पहचाना नहीं।

रमेश—ग्राप मुझे नहीं जानते पर मैंने ग्रापको पहचान लिया है।

बांकेलाल—लो बोलो ! मुझे तो याद ही नहीं ग्रा रहा कि ग्रापको कहाँ देखा है ?

रमेश—खैर, ग्रब ग्राप जी भरके देख लीजिए।

बांकेलाल—**(रमेश को सिर से पैर तक गौर से देखते हुए)** लगते तो इन्सान ही हो।

रमेश—हाँ, ग्रापका ग्रनुमान ठीक ही है। मैं बताऊँ ग्राप कौन हैं ?

बांकेलाल—लो बोलो !

रमेश—ग्राप हैं···**(कुछ सोचकर)** 'मजनू के बाप !'

बांकेलाल—क्या मतलब ?

रमेश—मेरा मतलब है रात ग्रापने 'लैला-मजनू' नाटक में मजनू के बाप का पार्ट किया था।

बांकेलाल—ग्रोह ! लो बोलो ! ग्रापको ड्रामा कैसा लगा ?

रमेश—बहुत बढ़िया। ग्रापने तो लाजवाब काम किया।

बांकेलाल—**(प्रसन्न होकर)** लो बोलो ! जो मिलता है यही कहता है।

रमेश—ग्राप तो सचमुच मजनू के बाप लग रहे थे। सच मानिए दर्शकों को विश्वास हो गया था कि मजनू चाहे मर चुका हो पर उसका पिता ग्रभी तक जीवित है। कमाल है साहब !

बांकेलाल—लो बोलो ! मैं तो सदा ऐसी ही एक्टिंग करता हूँ। **(कुछ रुककर)** तुम बड़े रंगीले हो। बाल सफेद हो गए हैं पर दिल बूढ़ा

नहीं हुआ।

रमेश—न दिल बूढ़ा हुआ है और न बाल सफेद हुए हैं।

[**बांकेलाल आश्चर्य से रमेश की दाढ़ी की तरफ देखता है**]

रमेश—(**अपनी नकली दाढ़ी उतारते हुए**) यह सब नकली है।

बांकेलाल—(**आश्चर्य से**) लो बोलो! यह क्या झमेला है?

रमेश—बात यह है कि मैं बड़ी मुसीबत में हूँ। आप मेरी मदद कर सकते हैं?

बांकेलाल—मैं!

रमेश—हाँ-हाँ आप! मैं तो कल से आपको ढूंढ रहा हूँ। आपसे मुझे बहुत जरूरी काम है।

बांकेलाल—कहिए, मैं क्या कर सकता हूँ?

रमेश—आप सब-कुछ कर सकते हैं। देखिए इनकार न कीजिएगा।

बांकेलाल—बताओगे भी क्या करना है?

रमेश—आपको मेरे पिताजी बनना पड़ेगा।

बांकेलाल—लो बोलो! बेटे को गोद लेते तो मैंने भी सुना है पर तू तो बाप को गोद लेगा।

रमेश—मैं सच कह रहा हूँ।

बांकेलाल—लो बोलो! मुझे अपना बाप बना के तुझे क्या मिलेगा। पहली बात तो यह है कि मैं दस-पन्द्रह वर्ष तक मरूँगा नहीं और दूसरे अगर मरा भी तो दो-चार सौ के बिल ही छोड़ जाऊँगा।

रमेश—मेरा मतलब है कि आपको मेरे पिताजी का अभिनय करना होगा।

बांकेलाल—ऐक्टिंग तो मैं तुम्हारे पिताजी के पिताजी की भी कर दूंगा। नाटक कहाँ होगा?

रमेश—मेरे अफसर के घर पर, जो इस सामने वाले मकान में रहता है।

बांकेलाल—लो बोलो! क्यों मजाक कर रहे हो? यहाँ स्टेज कैसे

बनेगा ?

रमेश—स्टेज तो बना-बनाया है। मेरा मतलब है कि मैं एक दफ्तर में नौकर हूँ। मैं बिना छुट्टी दफ्तर से गायब रहा और इसी तरह के एक-आध और कारनामे कर बैठा। इसके फलस्वरूप मुझे दफ्तर से मुअत्तल कर दिया गया है और सुना है कुछ दिनों बाद बरखास्त भी कर दिया जाऊँगा।

बांकेलाल—लो बोलो ! मुझे क्यों अपने झगड़े में फँसाते हो ?

रमेश—घबराओ नहीं। आप इस मकान में चले जाइए और मेरे अफसर से मिलिए। आप उससे कहिए कि आप मेरे पिताजी हैं और जब से आपने यह सुना है कि मैं नौकरी से निकाल दिया जाऊँगा आपकी नींद हराम हो गई है, आपने खाना-पीना छोड़ दिया है, मैं आपके बुढ़ापे का सहारा हूँ······ मेरा अफसर बहुत रहम-दिल है। वह आपका रोना-धोना देखकर मुझे माफ कर देगा।

बांकेलाल—जैरामजी की। **(जाने लगता है)** अपने से यह काम नहीं होगा। कोई और पंछी ढूंढो।

रमेश—ऐसा न कहो। मान जाओ। आपके थोड़ी देर ऐक्टिंग करने से मेरा भला हो जाएगा। वैसे तो मैं खुद ही अपना पिता बनकर अपने अफसर के पास जा रहा था, इसीलिए यह सफेद दाढ़ी लगाकर आया था। पर सौभाग्य से आप मिल गए। आपने रात इतना अच्छा अभिनय किया था कि दर्शकों के नेत्रों में आँसू आ गए थे। आप यह काम बहुत अच्छी तरह से कर सकते हैं। मुझे पूरा विश्वास है कि अगर आप अभिनय करेंगे तो मेरे अफसर का दिल जरूर पिघल जाएगा। मैं आपको इसकी फीस दूंगा।

बांकेलाल—लो बोलो ! मैं तुम्हारे अफसर की क्यों खुशामद करूं ? मैं किसी के आगे हाथ-पैर नहीं जोड़ सकता।

रमेश—पैर कहाँ सिर्फ हाथ ही जोड़ने हैं। देखिए वह नाटक, क्या··नाम·· था···उसका—हाँ···'मियाँ की जूती मियाँ के सिर !'

उसमें तो आपकी बीबी ने आपको झाड़ू से पीटा था।

बांकेलाल—वह नाटक की बात थी।

रमेश—तो यह भी तो नाटक है। आपको केवल १० मिनट के लिए अभिनय करना है।

बांकेलाल—हाँ, अभी आप फीस के बारे में क्या कह रहे थे ?

रमेश—मैं कह रहा था कि मैं आपको इस १० मिनट के अभिनय के लिए २० रुपए दूंगा।

बांकेलाल—तो फिर मैं तुम्हारा काम कर दूंगा।

रमेश—भगवान् आपका भला करे। मैं आपका ऐहसान कभी नहीं भूलूंगा और कभी आपको आवश्यकता पड़ी तो मैं आपका पिता बन जाऊँगा।

बांकेलाल—हाँ, ठीक है। वक्त पर तो आदमी गधे को भी बाप बना लेता है।

रमेश—(व्यंग्य से) जी हाँ ! जी हाँ !

बांकेलाल—तो फिर अब मुझे जरा ठीक से समझा दो।

रमेश—मैंने बताया न कि आपको मेरे अफसर के सामने गिड़-गिड़ाना है। मतलब यह कि आप मेरे अफसर से कुछ इस तरह कहिएगा कि उसे आप पर रहम आ जाए। इसके लिए आपको रोना पड़े, हाथ जोड़ने पड़ें, पाँव पड़ना पड़े, जो-कुछ भी करना पड़े कीजिएगा।

बांकेलाल—लो बोलो ! हाथ जोड़ना, पाँव पड़ना और रोना-ऐक्टिंग में अलग-अलग तीन ऐक्शन हैं।

रमेश—क्या मतलब ?

बांकेलाल—हाथ जोड़ने के दो रुपए, पाँव पड़ने के चार रुपए और रोने के पाँच रुपए होंगे।

रमेश—यह तो बहुत ज्यादा हैं, कुछ तो कम कीजिए।

बांकेलाल—लो बोलो ! क्या बात करते हो, जी ! आजकल तो हर चीज की कीमत बढ़ रही है। और हाँ, रोना असली होगा

या नकली ?

रमेश—(आश्चर्य से) असली या नकली ! यह क्या बला है ?

बांकेलाल—लो बोलो ! आपको यह भी पता नहीं ! असली रोने में बाकायदा आँसू टपकेंगे और नकली में सिर्फ रोने की आवाज होगी, आँसू नहीं आएँगे । असली रोने के पाँच रुपए अधिक होंगे ।

रमेश—वाह साहब ! आप तो आँसुओं की दुकान लगा के बैठ गए !

बांकेलाल—आपकी मर्जी है खरीदिए या…

रमेश—ओह ! आप तो नाराज हो गए…

बांकेलाल—लो बोलो ! नाराजगी की क्या बात है ? तो फिर असली रोना रोऊँ या नकली ? मैं तो आपको यही राय दूंगा कि आप असली रोना ही बुक कीजिए । दो चार-रुपए का मुंह न देखिए । मुझे विश्वास है असली रोना कभी बेकार नहीं जाएगा ।

रमेश—कुल कितने रुपए हुए ? (उंगलियों पर गिनते हुए) २ हाथ जोड़ने के, ४ पांव पड़ने के और ५……

बांकेलाल—५ नहीं १०, असली रोने के। और २० एक्टिंग करने के ।

रमेश—कुल ३६ हुए । खैर, मैं आपको ३० रुपए दे दूंगा ।

बांकेलाल—मैंने आपको ठीक ही बताए हैं। इससे एक पैसा कम न होगा ।

रमेश—अच्छा साहब ३२ रुपए ले लीजिएगा । अगर मेरा काम हो गया तो एक बढ़िया पार्टी दूंगा ।

बांकेलाल—तुम भी क्या याद करोगे । तुम्हारा भी काम कर देते हैं । अच्छा एक पैकेट सिगरेट तो दिलवाओ ।

रमेश—आप जाते ही उनके पैर पकड़ लीजिएगा । रोने लग जाइएगा । जब वह बहुत पूछें तब अपनी बात कहिएगा ।

बांकेलाल—अच्छा तो फिर अपनी नकली दाढ़ी मुझे दे दो ।

रमेश—हाँ, यह लीजिए।

बांकेलाल—(दाढ़ी लगाते हुए) अच्छा तो मुझे डायलाग लिख के दे दो।

रमेश—मैं क्या डालयाग लिखूं ! आपको समझा तो दिया है।

बांकेलाल—कोई चिन्ता नहीं। मैं पुराने नाटकों में से डायलाग फिट कर लूंगा।

रमेश—अच्छा तो बस आप अन्दर चले जाइए। यही मेरे अफसर का मकान है। मैं एक तरफ हो जाता हूँ।

[रमेश एक तरफ हो जाता है। बांकेलाल दरवाजे में से अन्दर चला जाता है। बांकेलाल यहाँ पर अपने सम्वाद पुराने पारसी थियेटर के अभिनेता की तरह बोलता है।]

बांकेलाल—सरकार ! हुजूर !

[सुरेन्द्र का कमरे में प्रवेश]

सुरेन्द्र—तुम कौन हो ?

बांकेलाल—(रुमाल से आंसू पोंछते हुए) यह एक बदनसीब बाप है जिसका मरना या जीना आपके हाथ है।

सुरेन्द्र—तुम क्या चाहते हो ?

बांकेलाल—भिखारी हूं तेरे दर का भीख चाहता हूँ। कुछ और नहीं चाहिए, बस रहम चाहता हूँ।

सुरेन्द्र—(कुछ चिढ़कर) अजीब आदमी हो ! आखिर यह सब क्या है ?

बांकेलाल—मेरा लड़का आवारा है, पर बुढ़ापे का सहारा है। आप उसके अफसर हैं पर मेरे तो परमेश्वर हैं।

सुरेन्द्र—देखो शोर नहीं मचाओ। धीरे बोलो। क्या चाहते हो सीधी तरह बताओ ?

बांकेलाल—हुजूर ! मेरे लड़के को आपने मोअत्तल कर दिया है और सुना है हुजूर उसे बरखास्त कर रहे हैं।

सुरेन्द्र—क्या नाम है उसका ? अच्छा मैं अभी आया।

[सुरेन्द्र बाहर चला जाता है]

बांकेलाल—नाम ! हे भगवान् ! नाम तो पूछा ही नहीं, अब क्या करूँ ? उस्ताद ठीक ही कहता था—बिना रिहर्सल स्टेज पर नहीं आना चाहिए। हाय अब क्या करूँ ?

[सुरेन्द्र अन्दर आ जाता है]

सुरेन्द्र—हां तो क्या नाम है तुम्हारे लड़के का ?

बांकेलाल—(बात टालते हुए) हुजूर। क्या नाम लूं उस नालायक का।

सुरेन्द्र—मोहन डबराल !

बांकेलाल—हुजूर, वही है मेरा लाल।

सुरेन्द्र—वह बिना छुट्टी दफ्तर से गायब रहता है। वह बहुत शैतान है।

बांकेलाल—मानता हूं, हुजूर। इस बार माफ कर दीजिए।

सुरेन्द्र—मैंने उसे चेतावनी भी दी थी।

बांकेलाल—हुजुर बड़े नेक हैं। आजकल तो अफसर मातहतों से कुछ न कुछ लेते हैं देता कौन है।

सुरेन्द्र—उसने दफतर का कुछ फाइल भी खो दिया है।

बांकेलाल—हुजूर, मैं नई फाइलें ला दूंगा।

सुरेन्द्र—तुम जाओ। मैं देखूंगा कि क्या कर सकता है।

बांकेलाल—सरकार आप मालिक हैं। आप सब-कुछ कर सकते हैं। उसकी मां ने तो रो-रोकर बुरा हाल कर लिया है।

सुरेन्द्र—(आश्चर्य से) मां ! अभी कुछ दिन हुए उसने अपनी मां की मृत्यु के कारण छुट्टी ली थी।

बांकेलाल—(कुछ सोचकर) हां हुजूर ! वह उसकी नहीं, मेरी मां मरी थी। वह अपनी दादी को मां ही कहता था। अपनी मां को चाची कहता है।

सुरेन्द्र—अच्छा तुम……

बांकेलाल—**(एकदम पैर पकड़कर)** हुजूर रहम ! मुझ पर कहर टूटा है, मुझे किस्मत ने लूटा है।

सुरेन्द्र—इस बार तो मैं उसे दफ्तर में रख लूंगा मगर फिर कभी उसने……

बांकेलाल—हुजूर, अगर फिर वह ऐसी हरकत करे तो आप उसे गोली मार दीजिएगा। मैं आपके पास नहीं आऊँगा।

सुरेन्द्र—उसे कहो कि अब ठीक से काम करे।

बांकेलाल—दुआएँ दूं, बड़ा इकबाल हो सरकार का सिला भगवान् देगा आपको उपकार का।

[बांकेलाल कमरे से बाहर गली में आ जाता है। सुरेन्द्र भी अन्दर चला जाता है। रमेश बड़ी उत्सुकता से बांकेलाल के पास आता है]

रमेश—क्या हुआ ?

बांकेलाल—मार दिया हाथ !

रमेश—क्या कहा उसने ?

बांकेलाल—बस यही कि उससे कह दो फिर कभी ऐसा न करे।

रमेश—सच !

[रमेश एकदम बांकेलाल से चिपट जाता है]

रमेश—वाह, मेरे पिताजी ! जीओ भगवान् करे तुम फिल्म के हीरो बन जाओ।

बांकेलाल—अच्छा तो अब पैसे निकालो।

रमेश—यह लो।

[अपनी एक जेब से दस का नोट निकालकर उसे देता है और अपनी दूसरी जेबें टटोलने लगता है।]

बांकेलाल—पर यार तुमने नाम तो बताया ही नहीं था।

रमेश—**(घबराकर)** तो तुमने क्या कहा !

बांकेलाल—तुम बांकेलाल को क्या समझते हो ! कई नाटकों में

डायलॉग भूला हूँ पर ऐसा पैबन्द लगाता हूं कि मजाल है देखने वालों को कुछ भी पता लगे।

रमेश—जल्दी बता। फिर क्या हुआ।

बांकेलाल—उसने कहा—'तुम्हारे लड़के का क्या नाम है? सच जानियो अपने तो होश नहीं रहे, काटो तो खून नहीं। पर मैंने जरा सोचा और कह दिया, 'क्या नाम लूं उस नालायक का।'

रमेश—तो क्या मेरा नाम ही नहीं बताया।

बांकेलाल—सुन तो सही। इसके बाद उसने खुद ही तेरा नाम बता दिया। उसने कहा, 'मोहन डबराल' मैंने कहा, 'वही है मेरा लाल!'

रमेश—हाय राम! कर दिया सत्यानाश! मेरा नाम तो रमेश है। मोहन का भी मेरा जैसा केस है।

[रमेश चल देता है]

बांकेलाल—भई मेरे बाकी पैसे।

रमेश—वह मोहन डबराल से लेना।

[रमेश के पीछे बांकेलाल भी 'सुनिए, सुनिए' कहता हुआ चला जाता है]

पर्दा उठने से पहले

पात्र

अनिल	:	एक नाटककार और निर्देशक
शीला	:	अनिल की पत्नी
धनीराम	:	एक सेठ का मुंशी
मक्खनलाल	:	अनिल का बातूनी पड़ोसी
मुन्नू	:	अनिल का पुत्र
पिंडीदास सुब्रामनियम	:	अनिल के पड़ोसी
वीना	:	अनिल के नाटक की नायिका

[मध्यम वर्ग की एक बैठक। बैठक निर्देशक की सूझ-बूझ और नाटक खेलने वाली संस्था की आर्थिक स्थिति के अनुसार सजाई जा सकती है। बैठक में रेडियो, बुकशैल्फ और अन्य सजावट की वस्तुओं के अतिरिक्त अंगीठी पर एक टाइम-पीस भी रक्खा है। दीवार पर भगवान् कृष्ण या किसी और देवता का चित्र टंगा हुआ है। पर्दा उठने पर शीला एक कुर्सी पर बैठी हुई स्वेटर बुनती हुई दिखाई पड़ती है।

पर्दा उठने के बाद नेपथ्य से आठ बजने की आवाज आती है। शीला सुनकर स्वेटर बुनना बन्द कर देती है।]

शीला—सुबह आठ बजे के निकले हैं, रात के आठ बजने को आए। इनकी बला से कोई मरे या जिए! (उठकर घड़ी में चाबी देते हुए) न अपना होश न किसी दूसरे की खबर! बस, रात-दिन रिहर्सल-रिहर्सल! भगवान् न करे किसी के पति को नाटकबाजी की लत हो। (चौंककर) हाय राम! यह तो दाल नीचे लग गई।

[शीला अन्दर चली जाती है। दूसरे दरवाजे से अनिल धीरे-धीरे हाथ में जूते लिए हुए इधर-उधर देखता हुआ आता है। एक बार अन्दर के दरवाजे की तरफ झाँककर देखता है और फिर भगवान् के चित्र के सामने खड़ा हो जाता है।]

अनिल—हे भगवान्! तुम तो अन्तर्यामी हो। तुम्हें तो पता लग गया होगा कि परसों मेरा नाटक है और आज हीरोइन ने जवाब दे दिया है। अब क्या करूं? इस बार तो किसी तरह लाज रख लो, प्रभु! आगे कभी नाटक नहीं करूँगा, कभी नहीं करूँगा! (कान को हाथ लगाने लगता है पर अचानक यह देखकर कि उसके हाथ में जूते हैं क्रोध से जूते फेंक देता है) क्षमा करना भगवान्।

शीला—(जूते पटकने की आवाज सुनकर अन्दर से ही) सत्यानाश हो इस बिल्ली का! जरा दरवाजा खुला रह गया और झट अन्दर!

[शीला की आवाज सुनकर अनिल बाहर दौड़ जाता है। शीला हाथ में बेलन लिये हुए आती है]

शीला—(**इधर-उधर बिल्लो को ढूंढते हुए**) निकल बाहर !

अनिल—(**डरते हुए दरवाजे पर खड़े होकर**) इजाजत हो तो रात यहीं काट लूं। सुबह फिर निकल जाऊंगा।

शीला—(**संभलकर**) ओह आप ! (**फिर तुनककर**) ठीक तो है। घर तो आप रात काटने ही आते हैं। आपने तो घर को सराय समझ रखा है, सराय !

अनिल—तुम तो बस यूं ही नाराज हो जाती हो। कभी यह भी पूछा है कि मैं किस मुसीबत में हूँ ! क्यों देर हो गई ?

शीला—तुम्हारे लिए घर पर रहना सबसे बड़ी मुसीबत है। बाहर तो मौज रहती है, मौज !

अनिल—रिहर्सल कराने को तुम मौज कहती हो।

शीला—रिहर्सल ! रिहर्सल ! तुम पर तो चौबीसों घण्टे रिहर्सल का ही भूत सवार रहता है !

अनिल—रिहर्सल पर ही नाटक की सफलता निर्भर है, शीला तुम नहीं जानती···

शीला—(**बीच में**) मैं जानना भी नहीं चाहती। पर तुम कान खोल कर सुन लो। मैं यह रिहर्सल विहर्सल कुछ नहीं जानती। कल से दफ्तर के बाद सीधे घर आना होगा, नहीं तो मुझे मेरे मेके भेज दो, पीछे सारे दिन रिहर्सल किया करना। मैं पूछती हूँ नाटक का इतना ही शौक था तो शादी क्यों की थी ?

[**अनिल एकदम जोर से खांसता है और फिर पानी मांगता है। शीला जल्दी से पानी लेकर आती है।**]

शीला—लो, पानी पी लो।

अनिल—(**पानी पीता है**) हे भगवान् !

शीला—कैसी तबीयत है अब ?

अनिल—(**हँसकर**) मेरी तबीयत तो ठीक है। पर तुम्हारा पारा कुछ उतरा कि नहीं !

शीला—(**बिगड़कर**) ओह ! तो क्या यह खांसने की रिहर्सल कर रहे थे !

अनिल—यह तो तुम्हारा गुस्सा उतारने की एक खुराक थी।

शीला—अच्छा, यह बहानेबाजी छोड़ो और···

अनिल—तुम्हें हमारे प्यार पर गुस्सा आता है और हमें तुम्हारे गुस्से पर प्यार···

शीला—मुझे तो तुम्हारी रिहर्सल पर गुस्सा आता है।

अनिल—(**शरारत-भरे स्वर में**) और प्यार किस बात पर आता है ?

शीला—(**लजाकर**) तुम्हें तो हर वक्त मजाक सूझता है ?

अनिल—तो फिर इसका कोई समय नियत कर लो।

शीला—तुम्हें तो बातें बनानी आती हैं ! यहाँ इन्तजार करते-करते जान निकल जाती है।

अनिल—(**अपने स्वर को और मीठा बनाते हुए**) शीला तुम कितनी अच्छी हो ! मैंने पिछले जन्म में न जाने कौन से पुण्य किए थे जो तुम-जैसी पत्नी मिली। तुम-जैसी सुन्दर, सुशील और सुघड़ स्त्री तो बड़े भाग्य से मिलती है।

[**शीला जाने लगती है**]

अनिल—(**चौंककर**) अरे सुनो तो ! कहाँ चल दीं ?

शीला—तुम अपने ड्रामे का पार्ट याद करो। मुझे और बहुत काम है।

अनिल—मैं यह नाटक नहीं कर रहा। मैं यह तुम्हें कह रहा हूँ। सचमुच शीला, तुम कितनी समझदार हो !

शीला—सुबह तो कह रहे थे कि किस मूर्ख से पाला पड़ा है ?

अनिल—वह तो मेरी मूर्खता थी। मैं सचमुच बेवकूफ हूँ, जाहिल हूँ, नालायक हूँ और···

शीला—बस, इतना ही बहुत है। यह रही कलम-दवात, आज इतना ही लिख दो, बाकी फिर सही, नहीं तो भूल जाओगे।

अनिल—मैं मजाक नहीं कर रहा।

शीला—अच्छा अब बातें न बनाओ। कपड़े बदल लो और खाना खा लो।

अनिल—मैं तो भगवान् को और तुम्हारे पिताजी को रात-दिन मन-ही-मन धन्यवाद दिया करता हूँ जिन्होंने तुम-जैसी साक्षात् लक्ष्मी···

शीला—(**बीच में टोकते हुए**) मैं सब समझती हूँ। मैं कहे देती हूँ तुम्हारे नाटक-वाटक खेलने के लिए मेरे पास पैसे नहीं हैं। मैं कहती हूँ अगर तुम्हारे नाटक का खर्च टिकटों से पूरा नहीं होता तो क्या डॉक्टर ने बताया है कि नाटक खेलो।

अनिल—मुझे तुम्हारे पैसे बिलकुल नहीं चाहिएँ। मैं सच कहता हूँ अगर यह नाटक खेला गया, तो लोगों को टिकट नहीं मिलेगी।

शीला—हाय राम तो क्या सबको मुफ्त दिखाओगे !

अनिल—मेरा मतलब है···

शीला—हाँ, एक बात और सुन लो, मुझे तुम्हारा नाटक में लड़कियों के कन्धे पकड़ना और हाथ पकड़कर बाहर ले जाना बिलकुल पसन्द नहीं।

अनिल—तुम तो बहुत नैरो माइंडेड हो ! वह मेरी पत्नी है।

शीला—(**क्रोध से**) क्या कहा ? तो मैं क्या तुम्हारी···

अनिल—(घबराकर) मेरा मतलब है···वह नाटक में मेरी पत्नी है। हमें रंगमंच पर ऐसा अभिनय करना पड़ता है कि लोग समझने लगें कि हम सचमुच मियां-बीवी हैं।

शीला—लोग समझें या न समझें, पर तुम समझ लो मुझे यह सब अच्छा नहीं लगता।

अनिल—और जो तुम्हें पसन्द नहीं वह मुझे पसन्द नहीं। अब मेरे नाटक की नायिका वीना नहीं है।

शीला—तो कोई और उसकी बहन मिल गई होगी। पर मैं तो हैरान हूँ कि ये लड़कियां नकली बीवी बनने को कैसे तैयार हो जाती हैं।

अनिल—अभिनय एक कला है शीला।

शीला—मैं सब जानती हूँ। इन नकली बीवियों से तो तुम लोग

गालियाँ भी सुन लेते हो, थप्पड़ भी खा लेते हो। पिछले नाटक में तुम्हारे कितने जोर का थप्पड़ मारा था उसने ?

अनिल—वह तो नाटक का एक सीन था।

शीला—कितनी रिहर्सल की थीं उस सीन की ?

अनिल—बीस।

शीला—तो बीस चाँटे लगाए थे उसने !

अनिल—(**जरा झेंपकर बात टालते हुए**) अच्छा यह बहस छोड़ो। मैंने तो आज से निर्णय कर लिया है कि मेरे नाटक की नायिका तुम होगी।

शीला—मैं !

अनिल—हाँ, तुम।

शीला—मुझसे यह नाच-गाना नहीं होगा।

अनिल—तुम्हें न नाचना है, न गाना। केवल एक्टिंग करनी होगी।

शीला—तुम्हारा दिमाग तो खराब नहीं हो गया है।

अनिल—खराब नहीं, ठीक हो गया है। जानती हो ये हीरोइन कितने नखरे दिखाती हैं ! परसों मेरा नाटक 'अधूरा नाटक' खेला जाने वाला है और आज वीना रिहर्सल में नहीं आई।

शीला—मैं कहती हूँ इन नाटकों के चक्कर में बेकार पड़ते हो।

अनिल—क्या तुम नहीं चाहतीं कि दुनिया में मेरा नाम हो। यदि मेरा यह 'अधूरा नाटक' सफल हो गया तो रास्ते-चलते लोग इशारा किया करेंगे कि वह जा रहा है 'अधूरा नाटक' का लेखक और निर्देशक मेरे साथ तुम्हारी फोटो भी अखबारों में छपेगी और उसके नीचे लिखा होगा—नाटक के लेखक और उनकी पत्नी।

शीला—मुझसे यह न होगा।

अनिल—ऐसा न कहो। टिकट बिक चुके हैं। लोगों को निमंत्रण भेजा जा चुका है।

शीला—तो उसे मना लो जाकर। उसके हाथ जोड़ो। पाँव पड़ो!

अनिल—मुझसे यह न होगा। मैं सोचता हूँ उनकी क्यों खुशामद करूँ। तुम किससे कम हो! तुम मेरा साथ दो तो मुझे किसी की परवा नहीं।

शीला—मुझसे उस-जैसी एक्टिंग न होगी।

अनिल—वह एक्टिंग क्या खाक करती है! जब गुस्से में जोर से चीखती है तो ऐसा लगता है कि इंजन की सीटी बज रही हो और जब धीरे बोलती है तो ऐसा लगता है मानो ग्रामोफोन की चाबी खतम हो गई हो।

शीला—पहले तो बड़ी तारीफ करते थे!

अनिल—अपने मुंह से अपने नाटक की हीरोइन की कौन बुराई करता है। (खुशामद करते हुए) देखो शीला, बहुत थोड़ा समय है। परसों नाटक है। हमें रात-दिन रिहर्सल करनी पड़ेगी। पर मुझे विश्वास है कि तुम उससे अच्छा अभिनय करोगी। तुम वैसे भी उससे कहीं अधिक सुन्दर हो। तुम्हारी आम की फांक की तरह आँखें, सेब की तरह गाल, चीकू की तरह नाक और टमाटर से लाल होंठ, नारियल की तरह घने बाल और···और···

शीला—भूल गए अपना पार्ट! (हँसी) तुम्हें तो अपना डायलॉग भी याद नहीं है।

अनिल—(झेंपकर) ओफ! मैं अपना पार्ट नहीं याद कर रहा बल्कि तुमसे सच कह रहा हूँ। सचमुच तुम्हारी आम की फांक की तरह आँखें, सेब की तरह······

शीला—(हँसते हुए) तुम्हारा मतलब है मैं फलों की टोकरी हूँ!

अनिल—मैं मजाक नहीं कर रहा। विश्वास न हो तो शीशा देख लो।

शीला—तीन दिन हो गए है शीशा टूटे। तुमसे कितनी बार कहा···

अनिल—खैर छोड़ो। इस समय तो तुम मुझ पर ही विश्वास

करो, शीला, तुम सचमुच हीरोइन बनने के योग्य हो। वीना तो वैसे भी स्टेज पर जँचती नहीं। उसके धँसे हुए गाल, पतली नाक और मोटे होंठों ने तो उसे पूरा कार्टून बना दिया है।

शीला—पर तुम्हारे इश्तिहार उसे सौन्दर्य की मूर्ति, संगीत की देवी और नृत्य की रानी कहते हैं !

[दरवाजे पर दस्तक]

अनिल—यह बेवक्त न जाने कौन आ टपका !

शीला—अखबार वाला लगता है। सुबह भी अपने पैसे लेने आया था।

अनिल—तुम इससे कह दो कि अब के सरकारी नोटों की जगह हमारे ड्रामे के टिकट ले ले।

[धनीराम दरवाजा खटखटाता है]

धनीराम—अनिल बाबू !

अनिल—यह तो कोई और लगता है। मैं अन्दर चला जाता हूँ, तुम कह दो कि मैं घर में नहीं हूँ।

[शीला दरवाजा खोलती है]

धनीराम—नमस्ते, बहनजी।

शीला—नमस्ते। आइए अन्दर आ जाइए।

धनीराम—(**अन्दर आकर**) अनिल बाबू घर पर हैं ?

शीला—जी नहीं वह तो······

धनीराम—क्षमा कीजिएगा। क्या अनिल बाबू, जो प्रसिद्ध नाटककार हैं, यहीं रहते हैं ?

शीला—जी हाँ, रहते तो यहीं हैं पर···

धनीराम—(**जैसे बिना सुने हो**) वह तो महान् कलाकार हैं। उनके दर्शनों को आया था। कब तक लौटेंगे ?

अनिल—मैं भई आ गया। आइए, आइए।

[शीला अन्दर जाती है]

धनीराम—आपके नाटकों का जवाब नहीं साहब।

अनिल—(खुश होकर) आपने मेरा पिछला नाटक देखा होगा।

धनीराम—नहीं साहब, भला मैं नाटक कैसे देख सकता था। आपने पास तो भिजवाया ही नहीं था।

अनिल—आप कहाँ से तशरीफ ला रहे है ?

धनीराम—मैं सेठ गरीबदास का मुन्शी धनीराम हूँ।

अनिल—सेठ गरीबदास ?

धनीराम—जी हाँ, परसों आपने उनसे एक कालीन और सोफा-सेट ड्रामे के हॉल में भिजवाने के लिए कहा था न ?

अनिल—जी हाँ।

धनीराम—(घिघियाते हुए) ये चीजें ठीक वक्त पर पहुँच जाएँगी। सेठ साहब को तो नाटक का शौक नहीं है पर सेठानी को रामलीला और नौटंकी बहुत पसन्द है। उन्होंने दस पास मंगवाए हैं और साहब हम तो आपका नाटक जरूर देखेंगे और बच्चों को भी दिखाएँगे। पाँच पास मुझे दे दीजिए। सेठजी ने सोफा-सेट और कालीन पहुँचाने का काम मुझे ही सौंपा है।

अनिल—आप सोफा-सेट और कालीन मत भिजवाइएगा। अब जरूरत नहीं है।

धनीराम—(आश्चर्य से) क्या नाटक नही खेला जाएगा ?

अनिल—नहीं।

धनीराम—मगर साहब टिकट बिक चुके हैं, उनका क्या होगा ? क्या आप पैसे वापस करेंगे ?

अनिल—जी हाँ, पैसे वापस कर दूंगा।

धनीराम—(घबराकर) खैर टिकट वालों को तो आप पैसे वापस देकर शान्ति कर देंगे पर आपने पास वालों का भी सोचा है, उनका क्या होगा।

अनिल—वे सब फेल हो जाएँगे।

धनीराम—(निराश स्वर में) जी······अच्छा नमस्कार ! (चला जाता है) ।

अनिल—पास ! पास ! पास ! एक सोफ़ा-सैट के बदले पन्द्रह पास !

शीला—(तौलिए से हाथ पोंछती हुई अन्दर आती है) मैंने तो उसे कह दिया था कि घर पर नहीं हो । पर जब उसने कलाकार, नाटककार कहा तो फौरन बाहर निकल आए !

अनिल—देखो शीला, अगर मेरा नाटक न हुआ तो टिकट वाले पैसे वापस माँगेंगे, पास वाले मजाक उड़ाएँगे, दुनिया हँसेगी···

शीला—पर मैंने तो कभी नाटक में पार्ट नहीं किया ।

अनिल—(खुश होकर) उसकी तुम चिन्ता मत करो । पिछले साल वह शर्मा का नाटक था···क्या नाम था उसका, हाँ···"हम सब एक हैं"···उसमें उसकी हीरोइन ने तीन दिन पहले जवाब दे दिया । उसे तो चक्कर आने लगे । वेहोश हो गया । पर उसकी बीवी ने कहा—'तुम चिन्ता न करो । मैं नाटक में काम करूँगी ।' उसने रात-दिन एक कर दिया और ऐसा अच्छा अभिनय किया कि कमाल कर दिया । अखबारों ने मिया-बीवी की तारीफ के पुल बांध दिए ।

शीला—अच्छा बाबा मुझे क्या है ! तुम सिखा दो, जैसा मुझसे होगा कर दूंगी ।

अनिल—(खुशी से उछल पड़ता है) शाबाश ! थैंक यू, शीला, थैंक यू ! तुम कितनी अच्छी हो ! अच्छा आओ रिहर्सल शुरू करें । तुम्हारा एक आधुनिक फैशनेबुल लड़की का पार्ट है ।

शीला—(सोचते हुए) फैशनेबुल लड़की के पार्ट के लिए कोई अच्छी साड़ी चाहिए । (गिड़गिड़ाकर) तुमसे कितनी बार कहा है कि एक साड़ी ला दो पर तुम सुनते ही नहीं ।

अनिल—मिसेज वर्मा से साड़ी मांग लेना ।

शीला—मैं नहीं मांगूगी ।

अनिल—अच्छा बाबा मैं किसी से मांग लाऊँगा।

शीला—मैं किसी की उतरन नहीं पहनूंगी।

अनिल—मैं नई ला दूंगा।

शीला—(खुशी से) तो चलो पहले साड़ी ले आएं। फिर आकर रिहर्सल शुरू करेंगे।

अनिल—(समझाते हुए) शीला, समय बहुत कम है। रिहर्सल शुरू कर दो। साड़ी कल ले आएंगे।

शीला—और हां, वह मेरे टौप्स का टांका भी टूटा हुआ है, उसे भी बनवा लाना।

अनिल—मैं यह सब कर दूंगा।

शीला—अच्छा तो खाना खा लो, फिर रिहर्सल शुरू करेंगे।

अनिल—एक रिहर्सल तो कर लें, फिर खाना खाएंगे। बाहर की कुण्डी लगा लो, कोई आ न जाए। नाटक तो तुमने पढ़ा था?

शीला—एक बार पढ़ा तो था।

अनिल—तो बस ठीक है। तुम रेखा का पार्ट कर रही हो। (शीला के हाथ में पुस्तक देते हुए) लो, यहां से शुरू करो। हां-हां, शाबाश··· बोलो···

शीला—(डरते हुए) रवि, मैं तो तुम्हें अपना हृदय सौंप चुकी हूं। इसे कहीं खो न देना।

अनिल—शाबाश! जरा जोर से और दिल पर हाथ रखकर।

शीला—मैं तो तुम्हें अपना हृदय सौंप चुकी हूं। (अपना हाथ दाईं ओर छाती पर रखती है)।

अनिल—ऊँ हूं! दिल दाईं तरफ नहीं होता। बाईं तरफ हाथ रखकर कहो।

शीला—जब दिल दे ही दिया तो न दाईं तरफ रहा न बाईं तरफ!

अनिल—अच्छा छोड़ो। आगे चलो।

शीला—(**पढ़ते हुए**) क्या मैं भी तुमसे कुछ पूछ सकती हूँ ?

अनिल—पूछो।

शीला—(**जिस तरह अध्यापक विद्यार्थी से प्रश्न पूछता है**) 'क्या तुम मुझे सचमुच प्रेम करते हो ?'

अनिल—यह तो तुम इस तरह कह रही हो जैसे तुम दस का नोट देकर मुझसे हिसाब मांगती हो।

शीला—तो तुम्हीं बोलकर दिखाओ।

अनिल—देखो यूं··· (**अभिनय करते हुए**) 'क्या तुम मुझे सचमुच प्रेम करते हो ?' मेरा मतलब है जरा शरमाकर, लजाकर, गरदन उठाकर, नजरें झुकाकर।

शीला—(**बिगड़कर**) मुझसे नहीं होता। (**किताब फेंक देती है**)।

अनिल—(**मनाते हुए**) नहीं, नहीं, मेरा मतलब है तुम बिलकुल ठीक कर रही हो। अच्छा आगे चलते हैं। (**अभिनय**) 'रेखा, तुम मेरा जीवन हो, प्राण हो, आत्मा हो। मैं तुम्हारे बिना जीवित नहीं रह सकता। जिस तरह आइसक्रीम रेफ्रीजिटर के बाहर नहीं रह सकती उसी तरह मैं तुमसे अलग होकर जी नहीं सकता।'

शीला—तभी तो सारा दिन घर से बाहर रहते हो !

अनिल—मजाक छोड़ो। हां तो मैं कह रहा था कि मैं तुमसे अलग होकर जी नहीं सकता। (**अभिनय करते हुए**) रेखा, मैं तुम्हारे लिए आकाश के तारे तोड़ सकता हूँ, समुद्र में छलांग मार सकता हूँ, एवरेस्ट की चोटी पर चढ़ सकता हूँ···' (**शीला जोर से हँसती है**) हँसो नहीं।

शीला—(**हँसते हुए**) सामने वाले नीम के पेड़ से दो दातुन तो तोड़ नहीं सकते और डींग मार रहे हो कि ऐवरेस्ट की चोटी पर चढ़ सकता हूँ।

अनिल—मेरी जान पर बनी है और तुम्हें मजाक सूझ रहा है !

शीला—बुरे दिन आएं तुम्हारे दुश्मनों के ! अच्छा आगे बोलो।

अनिल—(**अभिनय करते हुए**) रेखा, जी चाहता है कि हम-तुम

ऐसी जगह चलें जहाँ और कोई न हो। कोई न न हो । (दरवाजे पर दस्तक) यह कम्बख्त कौन आ गया ? अच्छा में देखता हूँ कौन है। (दरवाजे पर दस्तक) कौन है ? (दरवाजा खोलता है) ।

मक्खनलाल—(प्रवेश करते हुए) अरे भई डरते क्यों हो ? मैं हूँ मक्खनलाल। जै रामजी की !

अनिल—जै रामजी की। आइए मक्खनलालजी, कहिए क्या हुक्म है ?

मक्खनलाल—हुक्म-वुक्म क्या, बात यह है कि इधर आए कई दिन हो गए थे। मैंने सोचा कि कहीं आप यही न समझें कि मैं आपसे नाराज-वाराज हो गया हूँ।

अनिल—यह आप क्या कह रहे हैं ! आप निश्चिन्त रहिए, अगर आप छः महीने भी न आएँ तो भी हम यह नहीं सोच सकते। वैसे यह आप ही का घर है ।

मक्खनलाल—भई, अपने को तो तुमसे मिले बिना चैन ही नहीं पड़ती। क्या बताऊँ इन दिनों कुछ फुर्सत-वुर्सत ही नहीं मिली। बात यह थी कि···

अनिल—(टालते हुए) कोई बात नहीं, आजकल काम से किसे फुर्सत मिलती है ।

मक्खनलाल—काम-वाम तो ऐसा ही था। बात यह थी कि मेरी मौसी का लड़का···

अनिल—(व्यंग्यात्मक ढंग से) आप ठीक कहते हैं। आजकल मेहमानों के मारे नाक में दम है ।

मक्खनलाल—नहीं भई, मेहवान-वेहमान को तो हम सिर पर बिठाते हैं। भागवान् के घर ही मेहमान आते हैं। जरा माचिस-वाचिस तो देना।

अनिल—(जेब से दियासलाई निकालते हुए) यह लीजिए।

मक्खनलाल—हाँ, तो मैं कह रहा था···लो, मैं सिगरेट की डिबिया-विबिया भी भूल आया।

अनिल—जी सिगरेट !

मक्खनलाल—आप बैठे रहो, मैं ले लेता हूं !

[**मक्खनलाल डिब्बी उठाने के लिए मेज की तरफ जाता है**]

अनिल—(**स्वगत**) यह तो चिपक ही गया। जाने का नाम ही नहीं लेता।

मक्खनलाल—लो, भूल गया। मैं क्या कह रहा था ?

अनिल—(**क्रोध दबाते हुए**) आप कह रहे थे कि आपको कहीं जरूरी काम से जाना है।

मक्खनलाल—(**बेफिक्री से**) काम-धन्धे तो दुनिया में लगे ही रहते हैं। आज तो मैंने सारे जरूरी काम-वाम एक तरफ रख दिए। बस, आपसे मिलने-विलने का ही परोगराम बनाया है। (**बड़े इतमीनान से कुर्सी पर बैठ जाता है**)

अनिल—बड़ी कृपा की आप ने लेकिन

मक्खनलाल—हां तो मैं कह रहा था कि इन दिनों मेरी तबीयत बवियत ठीक नहीं रही। बात यह थी कि...

अनिल—खैर, अब तबीयत कैसी है आप की ?

मक्खनलाल—ठीक है। पर पाँच-छः दिन जुकाम-वुकाम हो गया था। छीकें-वीकें आने लगी थीं।

अनिल—अब तो ठीक हैं न आप ?

मक्खनलाल—अजी मैंने भी परवा-वरवा नहीं की। बस, जुशांदा पिया और अपने काम में जुटा रहा। जुशांदा भी क्या, बस दो-चार तुलसी-वुलसी के पत्ते लिए, तीन-चार काली-वाली मिर्च ली और···

अनिल—मतलब यह कि जुकाम ठीक हो गया।

मक्खनलाल—मैं तो अपनी देसी-वेसी दवाइयों का ही परयोग करता हूँ। इन डॉक्टरों के पास सिवाय टीके-वीके के और सुलफादीन की गोलियों के और है ही क्या !

अनिल—सुलफादीन ! आपका मतलब सल्फा डायजीन की

गोलियों…

मक्खनलाल—हाँ कुछ ऐसा-वैसा ही नाम है।

[दोनों चुप हो जाते हैं]

मक्खनलाल—और क्या खबरें-वबरें हैं, अनिल बाबू !

अनिल—कोई खास बात नहीं। बात यह है कि मैंने एक हफ्ते से अखबार ही नहीं पढ़ा।

मक्खनलाल—तो कोई अपने दफ्तर-वफ्तर की खबर सुनाओ।

अनिल—सब ठीक-ठाक है।

मक्खनलाल—क्या बात है अनिल बाबू, तबीयत-वबीयत तो ठीक है ? कुछ उदास लग रहे हो।

अनिल—बस, आप की ही कृपा है।

मक्खनलाल—हाँ, वह आपका नाटक-वाटक कब हो रहा है ?

अनिल—परसों।

मक्खनलाल—लो परसों के एक सिनेमा के पास मिल रहे हैं। पर भैया हम तो तुम्हारा खेल देखेंगे। सिनेमा-विनेमा तो रोज ही देखते हैं। दो-चार पास-वास भिजवा देना।

अनिल—पास तो मैं आपके घर ही भिजवा देता। आपने बेकार कष्ट किया।

मक्खनलाल—कष्ट-वष्ट क्या ! यह तो अपना घर है। अपनी बिजली फ्यूज हो गई थी। मैंने सोचा दो-तीन घंटे अनिल बाबू के यहाँ ही आराम-वाराम करेंगे। (**कुर्सी में और धंस जाता है**)।

अनिल—दो-तीन घंटे ! (**जहर का-सा घूंट पीते हुए**) बात यह है कि हम लोग जरा बाहर जा रहे हैं।

मक्खनलाल—अब रात-वात को कहाँ जाओगे ?

अनिल—कुछ जरूरी काम है।

मक्खनलाल—ऐसा भी क्या जरूरी काम-वाम है ! बैठो यहीं गप-शप लगाते हैं।

अनिल—हम लोगों का एक दोस्त के यहां खाना है।

मक्खनलाल—तब तो घंटे-दो घंटे में लौट आओगे । मैं यहीं बैठता हूं।

अनिल—दरअसल हम लोगों को एक शादी में जाना है। रात वहीं रहेंगे।

मक्खनलाल—अच्छा तो भई फिर चलते हैं। देखूं शायद मोहनलाल जी घर आ गये हों। हां, पास जरूर भिजवा देना! नहीं तो मैं कल-वल खुद ही ले जाऊंगा।

अनिल—आप कष्ट न कीजियेगा। मैं पास भिजवा दूंगा।

मक्खनलाल—अच्छा तो दस पास भिजवा देना। चिन्ता-विन्ता न करना कोई पास बेकार नहीं जायेगा और एक-आध बच भी गया तो अगले दिन वापस हो जायेगा।

अनिल—(**बला टालते हुए**) अच्छा नमस्ते।

मक्खनलाल—जै रामजी की!

अनिल—हे भगवान्! मुश्किल से बला टली है। यह लोग न खुद कोई काम करते हैं और न किसी को करने देते हैं। (**पुकारकर**) शीला! शीला!

शीला—(**अन्दर से**) अभी आई।

अनिल—शीला, हमें एक मिनट व्यर्थ नहीं गंवाना चाहिए। लो, मैं शुरू करता हूं। (**अभिनय करते हुए**) "शीला, जब तुम···सोरी, शीला नहीं, रेखा! हां, रेखा, जब तुम मेरे पास होती हो तो मुझे स्वर्ग मिल जाता है मानो···मानो······'

[**तभी दूर से बिल्ली की म्याऊं-म्याऊं की आवाज आती है**]

शीला—रसोई में बिल्ली घुस गई है। मैं अभी निकाल कर आई (**जल्दी से रसोई की तरफ जाती है**)।

अनिल—ओह! मुझे भी अपना पार्ट याद नहीं। (**याद करते हुए**) हां मानो अतृप्त होंठो को अमृत मिल गया हो। (**अभिनय करते हुए**)

'जब मैं तुम्हारे पास होता हूँ तो मैं इस दुनिया में नहीं होता। मुझे...'

शीला—भाड़ में जाय तुम्हारी रिहर्सल ! ऐसी अशुभ बातें मुँह से न निकालो।

अनिल—शीला, तुम समझती क्यों नहीं ! यह नाटक है, नाटक ! अच्छा छोड़ो तुम यहाँ से पढ़ो !

शीला—(**पढ़ते हुए**) मैं क्या जानूं तुम मेरे कौन हो ! पर हाँ, जब तुम मेरे पास नहीं होते तो ऐसा लगता है जैसे मेरी दुनिया आबाद हो गई हो...'

अनिल—ओहो, आबाद नहीं बरबाद हो गई फिर से कहो।

शीला—(**बहुत तेजी से बोलती है**) 'जब तुम चले जाते हो, तो मुझे ऐसा लगता है कि मेरी दुनिया बरबाद हो गई हो।'

अनिल—ऊँह! मजा नहीं आया। जरा एक्टिंग करो। देखो, पहले सिचुएशन को समझ लो। (**समझाते हुए**) थोड़ी देर के लिए मान लो कि तुम मुझसे प्रेम करती हो और तुम्हारे पिताजी यह नहीं चाहते कि तुम्हारी शादी मुझसे हो।

शीला—वह कब चाहते थे ! वह तो मामाजी ने....

अनिल—अब छोड़ो भी ! अच्छा आगे चलो। शीला, जरा भावुक बनो। भूल जाओ हम-तुम पति-पत्नी हैं। भूल जाओ कि हमारी शादी हो चुकी है।

मुन्नू—(**तभी बाहर से मुन्नू पीपनी बजाता हुआ दाखिल हो जाता है**)। ममी ! ममी ! (**पीपनी बजाता है**)

शीला—लो, इसे म्यूजिक डायरेक्टर बना लो।

अनिल—(**क्रोध से**) शीला, तुम्हें क्या हो गया है ?

शीला—इतनी देर तक बाहर नहीं खेलते, बेटे।

अनिल—अभी तो साढ़े आठ ही बजे हैं। जाओ बेटा बाहर खेलो।

मुन्नू—पापा जी, आप तो परसों कह रहे थे कि आठ बजे के बाद

बाहर नहीं खेलना चाहिए।

अनिल—आज बाहर मौसम अच्छा है।

मुन्नू—नहीं, पापा जी, मैं तो आपके साथ खेलूंगा।

[**शीला हंसती है पर जब अनिल उसकी ओर देखता है तो एकदम चुप हो जाती है**]

अनिल—तुम तो ऐसे बैठ गई जैसे तुम से कोई मतलब ही नहीं। तुम्हीं जरा कहो न इसे। (**मुन्नू की ओर जाते हुए**) अच्छा बेटा, यह, लो दो आने, जाओ सामने लच्छू की दुकान से टाफी ले आओ।

मुन्नू—टाफी तो मेरे पास है। पापाजी, आपका नाटक परसों हो रहा है न ?

[**शीला चली जाती है**]

अनिल—हाँ।

मुन्नू—मुझे पिंकी और टुन्नू के लिए दो पास चाहिएँ।

अनिल—हाँ-हाँ, जरूर ले लेना। देखो अब जाओ टोनी के साथ खेलो।

मुन्ना—पापाजी, रामलीला की कहानी सुनाओ।

अनिल—रात को सोते समय सुनाऊँगा।

मुन्नू—नहीं पापा जी, अभी सुनाओ।

अनिल—देखो मुन्नू गीता आंटी आज नया बाजा लाई है। वह कह गई थी कि मुन्नू को भेज देना।

मुन्नू—नया बाजा !

अनिल—हाँ-हाँ !

मुन्नू—अहा जी, हम नया बाजा देखेंगे। (**मुन्नू खुशी में कूदता हुआ बाहर चला जाता है**)।

अनिल—ओफ्फो ! अब तुम कहाँ चली गईं ? शीला ! शीला !

[**शीला आती है**]

अनिल—तुम कहाँ चली गई थीं ?

शीला—अंगीठी में कोयले डालने गई थी। रिहर्सल के बाद खाना खाना है या आज व्रत ही रखना है !

अनिल—खाना भी खा लेंगे। तुम्हें चाहिए था कि इतनी देर में आगे पढ़ लेतीं।

शीला—नाटक तो मैंने पढ़ा हुआ है।

अनिल—अच्छा अब जरा आखिरी सीन की रिहर्सल कर लेते हैं। (किताब में दिखाते हुए) देखो, यहाँ से, शाबाश ! बोलो !

शीला—(पढ़कर) 'मेरे देवता ! मैं तो तुम्हारे चरणों की धूल हूँ, मुझे यूं न ठुकराओ।'

अनिल—जरा गला दबा कर रोते हुए। शाबाश ! आगे चलो। (शीला आगे बढ़ जाती है) ओहो ! मेरा मतलब आगे बढ़नेसे नहीं,··· मेरा मतलब आगे पढ़ने से है—हाँ शाबाश जरा रोते हुए···चलो··· मेरा मतलब पढ़ो।

शीला—(रोते हुए) 'मेरे देवता, मैं तो तुम्हारे चरणों की धूल हूँ। मुझे यूं न ठुकराओ। शीला रमेश के पैरों पड़ती है। रमेश उसे धक्का दे देता···है।

अनिल—यह तो ब्रैकेट में लिखा है। जो ब्रैकेट में लिखा हो उसे नहीं बोलते।

शीला—मुझे क्या पता ?

अनिल—(तभी जैसे कुछ याद आता है) वह मुन्नू की पिस्तौल कहाँ रखी है ? मैं अभी लाया। तब तक तुम इस सीन को फिर से पढ़ लो। (अनिल मेज की दराज में, फिर किताबों की अलमारी में पिस्तौल ढूंढता है, फिर अलमारी के नीचे से पिस्तौल उठाते हुए) लो, मिल गई। अच्छा अब आगे चलो। मुझे जरा क्यू दो।

शीला—क्या है ?

अनिल—क्यू ! मेरा मतलब अपनी पहली लाइन फिर बोलो···

शीला—यूं न ठुकराओ।

अनिल—मेरी आँखों से दूर हो जा, नहीं तो मैं तुझे मार डालूंगा।

शीला—इस जीवन से तो अच्छा है मैं मर जाऊँ। लो, चलाओ गोली। तुम्हें मेरी कसम है।

अनिल—मैं कहता हूँ हट जाओ मेरे रास्ते से, (जोर से) मत बना पागल मुझे नहीं तो...

[**दरवाजे से मि० सुब्रामनियम और लाला पिंडीदास झाँकते हैं**]

शीला—चलाओ गोली ! चलाओ।

अनिल—मुझे पागल न बनाओ। चली जाओ ! नहीं तो खून हो जाएगा, खून !

[**सुब्रामनियम और पिंडीदास झपटकर अनिल को पकड़ लेते हैं**]

सुब्रामनियम—व्हाट आर यू डूयिंग जी ?[1]

पिंडीदास—यानि तुम की करता है ?

अनिल—मुझे छोड़ दो !

सुब्रामनियम—तुम एजूकेटिड[2] होकर यह क्या करना जी ?

पिंडीदास—यानि तुम पढ़या-लिखया बन्दा ! ए की करता है ?

अनिल—मैं कहता हूँ आप लोग जाइए।

सुब्रामनियम—तुम सिस्टर[3] दूसरा कमरा में चले जाओ जी।

पिंडीदास—हाँ भैनजी,[3] तुम इक पास्से[4] हो जाओ।

अनिल—मैं कहता हूँ मैं अपने घर में कुछ भी करूँ आपको क्या !

सुब्रामनियम—तुम मरडर[5] करेगा जी तो पुलिस हमको भी पकड़ेगा।

पिंडीदास—यानि पड़ोसियों को भी गवाही देनी होगी।

सुब्रामनियम—हमको भी विटनैस देना होगा।

पिंडीदास—यानि कि गवाही।

---

१. आप क्या कर रहे हैं ? २. शिक्षित ३. बहनजी ४. तरफ ५. हत्या

अनिल—झटका देते हुए छोड़ दो।

सुब्रामनियम, पिंडीदास—पुलिस ! पुलिस !

[सुब्रामनियम और पिंडोदास गिर पड़ते हैं। शीला और अनिल देखते हैं। फिर दोनों हँस पड़ते हैं।]

सुब्रामनियम—वाट इज दिस,[1] अनिल बाबू ?

पिंडीदास—यानि, ए क्या है भई !

अनिल—आप लोग तो खूब डर गए।

सुब्रामनियम—डरने का बात है जी ! हमारी दिल तो अभी तक धुकुर-धुकुर करता जी।

अनिल—यह पिस्तौल तो मुन्नू का है।

सुब्रामनियम—वट व्हाट इज दिस ?

पिंडीदास—यानि ए सब की था ?

अनिल—यह तो हम लोग रिहर्सल कर रहे थे।

सुब्रामनियम—रिहर्सल ?

पिंडीदास—ओ क्यों भई ?

अनिल—ड्रामे का रिहर्सल। परसों मेरा नाटक खेला जा रहा है। उसी की रिहर्सल कर रहे थे।

सुब्रामनियम—इज इट राइट सिस्टर ?[2]

पिंडीदास—यानि क्या यह सच है, भैंनजी ?

शीला—जी हाँ !

पिंडीदास—वाह भाई अनिल बाबू ! तुमने तो कमाल कर दिया !

सुब्रामनियम—यह तो फर्स्ट अप्रैल के माफिक हो गया जी। अच्छा भाई रिहर्सल करो। मैं चलता हूँ।

अनिल—माफ कीजिए, आप लोगों को···

पिंडीदास—कोई नहीं। अब हम लोग जाता है।

---

१. यह क्या है २. ? बहनजी क्या यह सच है ?

[दोनों बाहर चले जाते हैं। शीला और अनिल हँसते हैं]

शीला—लो और करो रिहर्सल !

[दोनों वापस आकर दरवाजे में से झांककर एक साथ कहते हैं]

पिंडीदास, और सुब्रामनियम—नाटक का पास जरूर भेज देना। (दोनों चले जाते हैं)।

अनिल—यह तो नाटक में नाटक हो गया।

शीला—बस करो ! मैं बाज आई इस रिहर्सल से !

अनिल—(खुशामद करते हुए) यह न कहो शीला, नहीं तो मैं सचमुच पागल हो जाऊँगा। अगर यह नाटक न खेला गया तो लोग मुझ पर हँसेंगे, मेरा मजाक उड़ाएँगे। मेरा घर से बाहर निकलना मुश्किल हो जाएगा।

शीला—अच्छा है। इस बहाने दो-चार दिन आराम से तो घर बैठोगे।

[दरवाजे पर दस्तक]

शीला—लो फिर कोई आ गया। देखो कौन है !

अनिल—तुम दरवाजा खोलो और कह दो कि मैं घर पर नहीं हूँ। मैं अन्दर चला जाता हूँ।

[शीला दरवाजा खोलती है]

वीना—क्या मिस्टर अनिल यहीं रहते हैं ?

शीला—जी हां ! लेकिन वह इस समय घर में नहीं हैं।

[अनिल आवाज सुनकर दौड़ा हुआ आता है]

अनिल—कौन आप ?

वीना—हैलो अनिल !

अनिल—आइए, आइए ! मुझे तो किसी ने बताया कि आप बाहर चली गई हैं। हे भगवान् ! तूने मेरी लाज रख ली। बैठिए, बैठिए !

अनिल—(शीला से एक तरफ़) जल्दी से चाय बना दो।

शीला—कौन है ?

अनिल—मेरे अफसर की बीबी है। इसकी जरा अच्छी तरह खातिर कर दो।

शीला—नमस्ते बहनजी। मैंने आपको पहचाना नहीं था।

वीना—नमस्ते।

अनिल—जाओ, जल्दी करो!

शीला—मैं अभी आई, बहनजी! (चली जाती है)

अनिल—मुझे विजय ने बताया कि आप नाराज होकर बाहर चली गई हैं। सच जानिए मेरे तो होश उड़ गए, चक्कर आने लगे, पैरों के नीचे से जमीन खिसक गई।

वीना—उन्होंने आपको गलत बताया।

अनिल—आप सुबह रिहर्सल में क्यों नहीं आईं?

वीना—मुझे एक जरूरी काम हो गया था।

अनिल—मगर मेरा तो हार्ट फेल हो गया होता।

[शीला एक हाथ में प्लेट लिए आती है, पर दोनों की बातें सुनकर चुपचाप पीछे खड़ी हो जाती है।]

वीना—मैं आपको कभी धोखा नहीं दे सकती।

अनिल—आप कितनी अच्छी हैं! कितनी नेक हैं! आप एक महान् कलाकार हैं। आप तो इतना अच्छा अभिनय करती हैं कि बस कमाल है। और उस पर आपकी यह परसनैल्टी लोग देखते ही रह जाते हैं।

वीना—झूठी तारीफ करना तो कोई आपसे सीखे।

अनिल—मैं सच कहता हूं। आप सौन्दर्य की मूर्ति, संगीत की देवी और नृत्य की रानी हैं।

[शीला के हाथ से प्लेट गिर पड़ती है]

शीला—तो यह है वीना, जिसके लिए तुम कह रहे थे कि बोलती है तो ऐसा लगता है कि इंजन सीटी मार रहा है।

वीना—नान्सैन्स!

शीला—(**रोष-भरे स्वर में**) मेम साहब ! गाली देना अपने घर वालों को ! मैंने तुझ-जैसी बहुत देखी हैं।

अनिल—क्या कहती हो शीला ! वीना, इनका बुरा न मानना, इन का तो दिमाग खराब है।

शीला— झूठ बोलते शर्म नहीं आती ! तुम्हीं तो कह रहे थे कि नखरे दिखाती है। अकड़ती है। मैंने भी सोच लिया है उससे पार्ट नहीं कराऊंगा।

वीना—यह सब क्या है ! आप मेरी वेइज्जती कर रहे है !

शीला—बड़ी आई इज्जत वाली !

वीना—मुझे पता नहीं था कि तुम इतने कमीने हो ! खबरदार ! अब जो··· (**वीना क्रोध में जाने लगती है**)।

शीला—जा-जा······

वीना—खबरदार जो अब कोई मेरे पीछे आया।

अनिल—वीनाजी, सुनिए तो सही···

वीना—शट-अप !

अनिल—चली गई ! शीला, यह तुमने क्या किया ? शीला ! शीला !

शीला—जाओ, उसके हाथ जोड़ो और पैर पड़ो। मेरा तो दिमाग खराब है।

अनिल—लेकिन मेरे अधूरे नाटक का क्या होगा ?

शीला—कान खोल कर सुन लो मेरे जीते-जी अब तुम कोई नाटक नहीं खेलोगे।

[**शीला अन्दर चली जाती है**]

अनिल—मेरा नाटक तो पर्दा उठने से पहले ही खतम हो गया।